अगस्त-२०२४ ◆ वर्ष १३ ◆ अंक ०४ ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

मासिक
अगस्त-२०२४

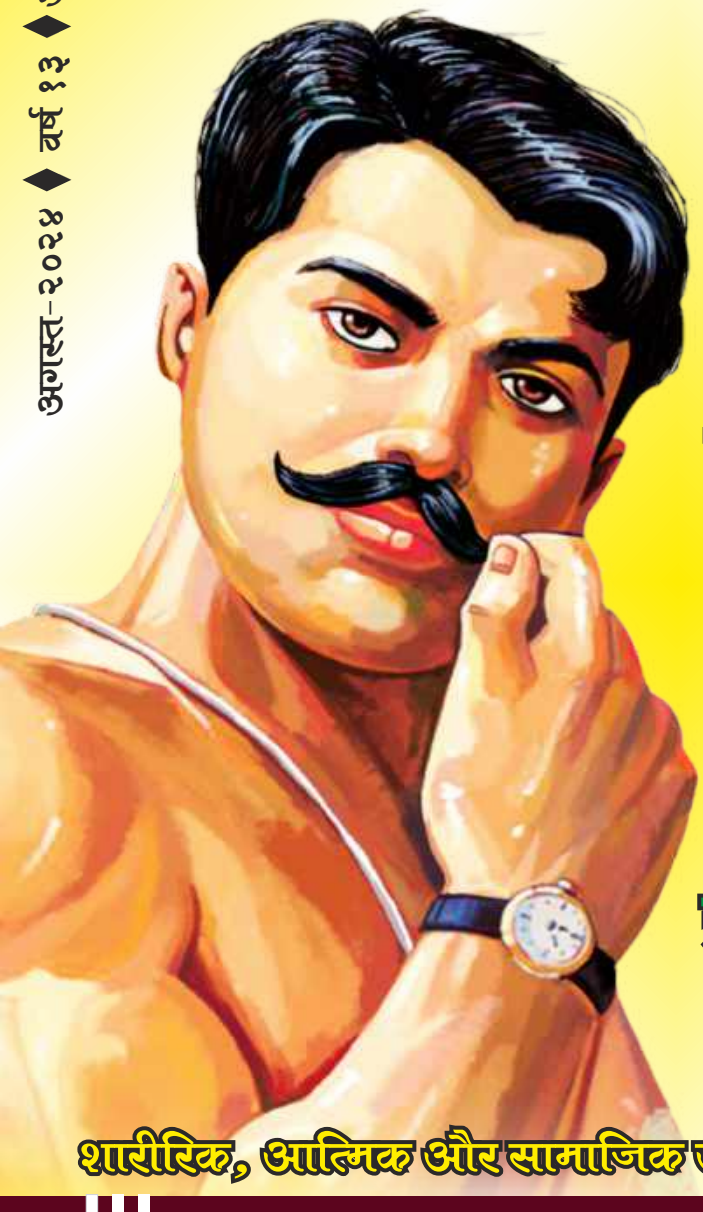

स्वतंत्रता की बलिवेदी पर,
जिन वीरों ने प्राण दिए।
उनमें से अग्रणी अनेकों,
ऋषिवर तुम्हारे शिष्य रहे।।

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर-313001 (राज.)

₹१५ (१५४)

सफलता के 6 मूल मंत्र

महाशय राजीव गुलाटी
चेयरमैन, महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लि०

MDH
मसाले
सेहत के रखवाले
असली मसाले सच - सच

महाशय धर्मपाल गुलाटी
संस्थापक चेयरमैन, महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लि०

For More Information Visit us on :

mdhspicesofficial | mdhspicesofficial | mdhspicesofficial | SpicesMdh

www.mdhspices.com

SCAN FOR MDH ORIGINAL RECIPES

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

प्रमुख संरक्षक - सत्यार्थ सौरभ

डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल

डॉ. महावीर मीमाँसक

डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

डॉ.सोमदेव शास्त्री

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक

अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक

भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग (ग्राफिक्स डिजाईनर)

नवनीत आर्य (मो. 9314535379)

व्यवस्थापक

भँवर लाल गर्ग

सहयोग ◆	भारत	विदेश
संरक्षक	- 11000 रु.	$ 1250
आजीवन	- 1500 रु.	$ 300
पंचवर्षीय	- 600 रु.	$ 125
वार्षिक	- 150 रु.	$ 30
एक प्रति	- 15 रु.	$ 10

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया मेन ब्रांच दिल्ली गेट, उदयपुर
खाता संख्या : 310102010041518
IFSC CODE- UBIN 0531014
MICR CODE- 313026001
में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत्
१९६०८५३१२५
श्रावण शुक्ल तृतीय
विक्रम संवत्
२०८१
दयानन्दाब्द
२००

सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नही है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

August - 2024

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)

कवर 2 व 3 (भीतरी आवरण) रंगीन
5000 रु.

अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)

पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	3000 रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	2000 रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	1000 रु.

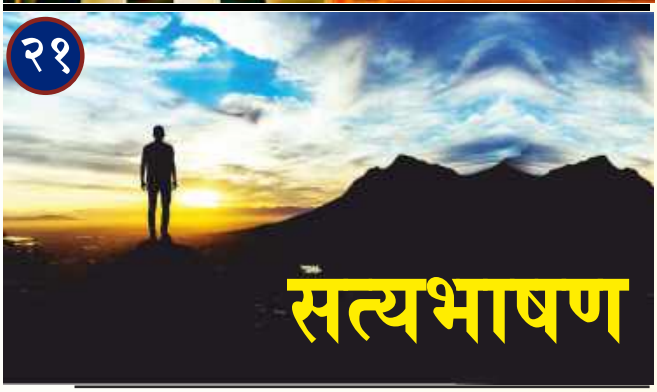

समाचार २९

हलचल ३०

०४	वेद सुधा
१३	अभेद्य वेद-किसे अपना शत्रु मानें?
१६	चोरी की विस्तृत व्याख्या
१९	विशेषकर विद्यार्थियों से
२५	आमवात (रूमेटाइड आर्थराइटिस)
२७	कथा सरित- कहानी दयानन्द की
२८	सत्यार्थ मित्र बनें

स्वामी श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - १३ अंक -०४

द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर **मुद्रण**

प्रकाशक
श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, गुलाबबाग, उदयपुर (राजस्थान) 313001
(0294) 4017298, 09314535379, 7976271159
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा निदेशक– मुकेश चौधरी, चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर–313001 से प्रकाशित, सम्पादक–अशोक कुमार आर्य

ओ३म्

वेद सुधा

जहाँ भगवान् वहाँ कल्याण

न घ्रंस्तताप न हिमो जघान प्र नभतां पृथिवी जीरदानुः।
आपश्चिदस्मै घृतमित्क्षरन्ति यत्र सोमः सदमित्तत्र भद्रम्।। - अथर्ववेद ७/१८/२

न घ्रंसः- न गरमी, **ततापः**- तपाती हो, **न हिमः**- {और} न सर्दी {ही}, **जघान**- मारती हो, **जीरदानुः**- {तब} जीव की प्राणभूत, **पृथिवी**- {शरीररूपी} भूमि, **प्र नभताम्**- उत्तमता से सम्बद्ध हो सकती है। **आपः चित्**- {जब} जल भी, **अस्मै**- इस {साधक} के लिए, **घृतम् इत्**- घी ही, **क्षरन्ति**- बरसाते हैं, **यत्र सोमः**- जहाँ साम {है}, **सदम् इत्**- हमेशा ही, **तत्र भद्रम**- वहाँ भला है।

व्याख्या

प्रभु-प्राप्ति के लिए सभी शास्त्रकार योगानुष्ठान का उपदेश करते हैं। योग कब और कहाँ करना चाहिए, इसका इस मंत्र में उपदेश किया है। कहा है-

न घ्रंस्तताप न हिमो जघान।

'न गरमी तपाती हो और न सरदी मारती हो।'

अर्थात् ऐसे स्थान में बैठो, जहाँ न गरमी अधिक लगे और न शीत का प्रकोप हो। दिन-दोपहर को गर्मी के कोप की सम्भावना और रात्रि को शीत के प्राबल्य की सम्भावना हो सकती है, अतः योगसाधन का समय प्रातः और सायं ही ठीक है। इन दोनों समयों में न गरमी अधिक होती है और सर्दी। लगभग समता-सी होती है। समता प्राप्त करने के लिए समतायुक्त समय ही सम्यक् होता है। श्वेताश्वतरोपनिषद् २/१० में कहा भी है-

समे शुचौ शर्करावह्निबालुकाविवर्जिते शब्दजलाश्रयादिभिः।
मनोनुकूले न तु चक्षुपीडने गुहानिवाताश्रयणे प्रयोजयेत्।।

समतल, पवित्र, कंकड़, पत्थर, आग, रेत से शून्य, शब्द, जलाश्रयादि-संयुक्त, मन के अनुकूल, आँखों को बुरा न लगने वाले गुफा और वायुरहित स्थान में योगसाधन करे।

वेद के **'न घ्रंस्तताप'**- की यह व्याख्या है। गरमी हो तब भी मन व्याकुल रहता है, अधिक शीत से भी शरीर ठिठुरता रहता हैं, दोनों अवस्थाओं में मन एकाग्र नहीं हो सकता। स्थान यदि ऊँचा-नीचा हो, तो आसन ठीक नहीं लग सकता। गन्दे स्थान में मन लगना असम्भव है। कंकड़-पत्थर आदिवाले ठिकाने में अशान्ति बनी रहती है। रेत शीघ्र ठण्डी और जल्दी तप जाती है, अतः रेतीला स्थान भी उपयुक्त नहीं हो सकता। स्थान सुन्दर और रमणीक होना चाहिए। गुफा आदि, जहाँ हवा के तेज झोंके न लगते हों, योगसाधन के लिए बहुत उपयुक्त हैं। ऐसे सुन्दर स्थान एवं उचित समय में शरीर और मन को इस योगसाधन में लगाना चाहिए। इसका फल बतलाया है-

आपश्चिदस्मै घृतमित्क्षरन्ति।

'ऐसे साधक के लिए जल भी घी बरसाने लगता है।'

अर्थात् सामान्य पदार्थ भी इसके लिए उत्तम फलों को उत्पन्न करने लगते हैं। शरीर तो मिट्टी, पानी, आग, हवा, आकाश का बना है, किन्तु यही जड़ शरीर इसे परमात्मा से मिला देता है। श्वेताश्वतरोपनिषद् २/१२-१३ में कहा है-

पृथ्व्यप्तेजोऽनिलखे समुत्थिते पंचात्मके योगगुणे प्रवृत्ते।
न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्।।

लघुत्वमारोग्यमलोलुपत्वं वर्णप्रसादः स्वरसौष्ठवं च।
गन्धः शुभो मूत्रपुरीषमल्पं योगप्रवृत्तिं प्रथमां वदन्ति।।

मिट्टी, पानी, आग, हवा, आकाश के संयोग से तैयार हुए इस पंच भौतिक शरीर में योगगुण आरम्भ होने पर साधक को न रोग होता है, न बुढ़ापा और न मौत। जिसने अपने शरीर को योगाग्नि से शुद्ध कर लिया है, उसका शरीर हल्का तथा रोगरहित हो जाता है। उसमें विषयलोलुपता नहीं रहती। उसका शारीरिक वर्ण उज्ज्वल हो जाता है और आवाज अच्छी हो जाती है। ये योगप्रवृत्ति के आरम्भिक चिह्न हैं।

योगी समता का साधन करता है। रोग विषमता से होता है; अतः समत्व के अभ्यास से रोग और रोग से उत्पन्न होनेवाला बुढ़ापा दोनों भाग जाते हैं। योगी के लिए मौत; मौत नहीं रहती, वह तो उसके इस संसार से छुटकारे का साधन बन जाती है। एक सन्त ने कहा है-

जिस मरने से जग डरे मेरे मन आनन्द।

इस प्रकार योगसाधन से शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य की सिद्धि होती है।

यह क्यों होता है। वेद इसका उत्तर देता है-

यत्र सोमः सदमित्तत्र भद्रम।

जहाँ प्रभु हो, वहाँ सदा भद्र रहता है।

योगसाधन से प्रभु का मेल होता है, प्रभु परमकल्याण-निधान हैं। वह सब दोषों, किल्बिषों से रहित हैं। उनकी प्राप्ति के साथ ही किल्बिष भाग जाते हैं। दुःख, दारिद्र्य, अमंगल, अशिव, अभद्रों का वहाँ क्या काम? जहाँ शान्ति=निरुपद्रवता होती है, वहाँ ही सभ्यता, सुशिक्षा, विद्या, शिल्प, धर्म आदि शुभगुणों की प्रवृत्ति हुआ करती है। भगवान् से बढ़कर शान्तिनिकेतन और कौन है? अतः जिस हृदय में भगवान् होगा, अर्थात् जहाँ भगवत्-पूजा, परमेश्वर की आज्ञा का पालन होता होगा-

सदमित्तत्र भद्रम। वहाँ सदा भद्र विराजेगा।

अतः कल्याणाभिलाषी को सदा प्रभु-पूजा करनी चाहिए। योगसाधन के द्वारा सदा अंग-संग रहनेवाले भगवान् का साक्षात्कार करके ऐसा यत्न करना चाहिए कि उसकी अनुभूति सदा होती रहे। भगवान् सदा सर्वत्र विद्यमान रहते हैं, किन्तु अज्ञान के कारण अज्ञानी जनों को उसका भान नहीं होता। उन्हें उससे प्राप्त हो सकने वाला आनन्द भी नहीं मिलता, अतः आनन्द अभिलाषी को उसको अपने आत्मा में अनुभव करने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए।

संकलनकर्त्ता एवं भाष्यकार- स्वामी वेदानन्दतीर्थ सरस्वती
सम्पादक- स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती
साभार- स्वाध्याय-सन्दीप

पत्रिका से सम्बन्धित किसी प्रकार की जानकारी/शिकायत के लिये निम्न चलभाष पर सम्पर्क करें।
09314535379

पाठकों के पास 'सत्यार्थ सौरभ' डाक विभाग की अव्यवस्था के कारण अनेक बार समय पर नहीं पहुँच पाती है। पाठक न्यास को ही दोषी मानते हैं, जिसे अनुचित भी नहीं कहा जा सकता। परन्तु वास्तविकता है कि यहाँ से प्रत्येक माह की 7 तारीख को पत्रिका प्रेषित कर दी जाती है। पश्चात् सब कुछ डाक विभाग की कृपा पर निर्भर करता है। फिर भी आपसे निवेदन है कि प्रत्येक माह की 20 तारीख तक भी पत्रिका न मिलने पर कृपया इसी चलभाष पर सम्पर्क करें। -सम्पादक

आत्म निवेदन

आर्य समाज स्थापना के १५० वर्ष

कहाँ खड़ा है आर्यसमाज?

गतांक से आगे.....

पाखण्ड-खंडिनी पताका जब महर्षि ने हरिद्वार में फहरायी तो उसे फहराते समय सैंकड़ों भागों में विभक्त हिन्दू समुदाय उनकी दृष्टि के समक्ष था। उन्होंने पाखण्ड-खंडिनी फहरायी ही इसलिए कि वे उन्हें सत्य सनातन वैदिक पथ का आग्रही बनाना चाहते थे न कि स्वयं उन जैसा बन जाना। ऐसे में आर्यसमाज भी उनमें से एक हो जाय ऐसा दयानन्द को क्योंकर स्वीकार्य हो सकता है?

आर्यसमाज की दशा और दिशा को लेकर जो भावनाएँ मन में उमड़-घुमड़ रहीं हैं उन्हें संक्षिप्त कर कैसे सीमा में आबद्ध किया जाय, समझ नहीं आ रहा। पर कुछ मूलभूत बात कर ही सकते हैं। महर्षि दयानन्द को जो कुछ स्वीकार्य है उसकी अगर एकमात्र कसौटी कहें तो उनका वेदानुकूल होना अनिवार्य है। इसमें यह भी है कि आज भी हिन्दू मात्र को वेद प्रमाण के रूप में स्वीकार हैं। इसलिए भी महर्षि ने समझा कि वेद के सही स्वरूप, सही अर्थ का उद्घाटन कर देना पर्याप्त होगा, क्योंकि उसमें जो भी है मनुष्य मात्र के लिए कल्याणकारी है। सार्वकालिक और सार्वभौमिक सत्य तो वह है ही। इसीलिए ऋषि का विश्वास था कि जिस दिन वे चारों वेदों का भाष्य पूर्ण कर लेंगे उस दिन सूर्य के समान प्रकाश हो जाएगा। लग ऐसा रहा है कि प्रकाश की बात तो कहें क्या अंधियारा ही गहरा रहा है। अतः देखना यह है कि आर्यसमाज की स्थापना के १५० वर्ष में भी क्या हम वेद के दयानन्दीय दृष्टिकोण को स्थापित करने में सफल हुए हैं? इसका उत्तर नकारात्मक है। वेद का आविर्भाव एक अरब ९६ करोड़ वर्ष पूर्व कौन विद्वान् मानता है? अगर हम यह स्थापित नहीं कर पाए तो वेद अपौरुषेय हैं यह भी स्थापित नहीं होता। इसके अभाव में वेद स्वतः प्रमाण हैं ऐसा दावा नहीं किया जा सकता। जो पौराणिक बन्धु वेद अपौरुषेय हैं यह मानते हुए भी जैसे ही वेद में इतिहास मानते हैं तभी उनकी अपौरुषेयता का खण्डन हो जाता है। यद्यपि आर्य विद्वानों ने वेदों में इतिहास नहीं है इस पर बहुत कुछ लिखा है परन्तु अनेक विद्वान् सायण की भाँति तब चूक कर जाते हैं जब अपौरुषेय कहते-कहते भी वेदों में इतिहास के दर्शन कर लेते हैं। हम उदाहरण देते हैं -

इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया।। - ऋग्वेद १०/७५/५

ऋग्वेद के दशवें मंडल के सूक्त ७५वें पाँचवे मन्त्र में आप गंगा, यमुना, सरस्वती नाम देख रहे हैं तो आप कूदकर इस नतीजे पर पहुँच जाते हैं कि जिन गंगा, यमुना, सरस्वती नदियों को हम जानते हैं यहाँ उनका ही

नाम है। एक लब्ध प्रतिष्ठ आर्य विद्वान् ने इनका इसी प्रकार भाष्य किया है। हमारी शंका है कि जब संसार के समस्त नाम वेदों से लिए गए हैं अर्थात् वेद पहले प्रादुर्भूत हैं जिनसे नाम लिए गए तो इन व अन्य नदियों के नाम वेद में कैसे हो सकते हैं? इसका अर्थ यह हुआ कि हमें यह जानना होगा कि यदि वेद की ये नदियाँ संसार में उपलब्ध इन्हीं नाम वाली नदियों से सम्बन्ध नहीं रखती हैं तो फिर उनके क्या अर्थ हो सकते हैं?

स्वामी ब्रह्ममुनि जी ने इस मन्त्र का जो अर्थ किया है उससे ज्ञात होता है कि इन नामों का सम्बन्ध उनकी विशेषताओं से है-

(गंगे) हे गमनशील समुद्र तक जानेवाली नदी! **(यमुने)** हे अन्य नदी में मिलनेवाली नदी! **(सरस्वति)** हे प्रचुर जलवाली नदी! **(शुतुद्रि)** हे शीघ्र गमन करनेवाली या बिखर-बिखर कर चलनेवाली नदी! **(परुष्णि)** हे परुष्णि-परवाली भासवाली-दीप्तिवाली इरावती कुटिलगामिनी **(असिक्न्या)** कृष्णरंगवाली नदी के स्थल **(मरुद्वृधे)** हे मरुतों वायुओं के द्वारा बढ़नेवाली फैलनेवाली नदी **(वितस्तया)** अविदग्धा अर्थात् अत्यन्त ग्रीष्म काल में भी दग्ध शुष्क न होनेवाली नदी के साथ **(आर्जीकीये)** हे विपाट्-किनारों को तोड़-फोड़नेवाली नदी **(सुषोमया)** पार्थिव समुद्र के साथ **(मे स्तोमं सचत–आ–शृणुहि)** मेरे अभिप्राय को या मेरे लिये अपने-अपने स्तर को सेवन कराओ तथा मेरे लिये जलदान करो।

यथा गंगा वह है जो समुद्र तक जाती है तो जो नदी अन्य नदी में मिल जाती है वह यमुना कहलाती है, तो प्रचुर जल वाली नदी सरस्वती है, इसी प्रकार अन्य हैं। इन्हीं गुणों के आधार पर संसार की नदियों का नामकरण कर दिया गया।

जिन विद्वान् का हमने ऊपर उल्लेख किया है इन्हीं की इस पुस्तक में अवैज्ञानिक अंधविश्वास की बातें वेदार्थ के रूप में हैं। उदाहरण दिए बिना अपनी बात को स्पष्ट नहीं कर पायेंगे।

ऋग्वेद के सातवें मण्डल के पचपनवें सूक्त के आठवें मन्त्र का अर्थ यह विद्वान् करते हैं-

'स्वापन विद्या से हम इत्र लगाने वाली स्त्रियों को सुला देते हैं।' अब आप स्वयं सोचें कि यह क्या अर्थ हुआ। प्रथम स्वापन विद्या कौनसी विद्या है जो लोगों को सुला देती है?

दूसरे, इत्र लगाने वाली स्त्रियाँ ही इससे सोती हैं जिन्होंने इत्र नहीं लगाया है वे इससे नहीं सोयेंगी? क्या पुरुष इससे नहीं सोयेंगे? और इत्र लगाने वाली स्त्री को सुलाया ही क्यों जा रहा है। ऊँटपटांग कुछ भी अर्थ, परन्तु सब ग्राह्य । आज जब इस पर आक्षेप किये जा रहे हैं तो बगलें झाँकी जा रही हैं।

सौभाग्य से इस मंत्र का महर्षि कृत अर्थ उपलब्ध है जहाँ ऐसे घर बनाने का निर्देश है जो स्त्रियों के लिए सुखवाला हो, सुन्दर हो, उत्तम हो। देखिये ऋषिकृत अर्थ-

हे गृहस्थों! जिस घर में स्त्री बसें वह घर अतीव उत्तम रखना चाहिये, जिससे निज सन्तान उत्तम हों।

जिन विद्वान् की हमने ऊपर चर्चा की है उन्हीं विद्वान् के मत में वेदों में शकुन अपशकुन के निर्देश भी हैं, देखिये एक उदाहरण- ऋग्वेद के १०वें मंडल के १६५वें सूक्त में उल्लू, कबूतर आदि शब्द आते हैं तो इन विद्वान् को उन-उन पशु-पक्षियों के द्वारा उत्पन्न अपशकुन का ध्यान आ जाता है। जबकि वहाँ ऐसा कुछ भी नहीं है।

ऋग्वेद के दशवें मण्डल के १६५वें सूक्त का विषय दूत से व्यवहार है। स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक कहते हैं-

इस सूक्त में दूत के साथ सद्व्यवहार करना चाहिए, दूत ही परराष्ट्र के साथ मित्रता कराता है शत्रुता भी, वह भोजन में, होमयज्ञ में सत्कार करने योग्य है, आदि विषय हैं।

परन्तु उक्त विद्वान् को पक्षियों द्वारा अपशकुन के दर्शन होते हैं। शकुन-अपशकुन को मानना क्या दयानन्द को

स्वीकार्य था? कैसे आर्य समाज के विद्वान् भी ऐसा अर्थ करते समय कुछ भी विचार नहीं करते। फिर तो बिल्ली के रास्ता काटना आदि सभी अंधविश्वास ठीक मानने चाहिए। मान्य विद्वान् इस सूत्र के पाँचवे मन्त्र का अर्थ करते हुए लिखते हैं-

ऋचा कपोतं नुदत प्रणोदमिषं मदन्तः परि गां नयध्वम्।
संयोपयन्तो दुरितानि विश्वा हित्वा न ऊर्जं प्र पतात्पतिष्ठः॥ - ऋग्वेद १०/१६५/५

हे देवों! तुम मन्त्र शक्ति से कपोत के अपशकुन को दूर करो।

अर्थात् कपोत से अपशकुन होता है और मन्त्रों में वह शक्ति है जिससे यह अपशकुन दूर हो जाएगा। इन दोनों स्थापनाओं पर आर्यसमाज के अधिकारी और विद्वान् उत्तर दें। जब दूसरे लोग आक्षेप कर रहे हैं तो हम हतप्रभ हैं। वस्तुतः दूत को स्तुति प्रशंसा के साथ वापस भेजना चाहिए, अपने अन्न, गवादि पशु को परिपुष्ट बनाना चाहिये, अपनी समस्त कमियों को गुप्त रखना या उनको पूरा करना चाहिए, अपने शासनबल को भी दूत न जान सके, वह ऐसे ही वापस जावे। इस सूक्त के मन्त्रों के इस प्रकार के वास्तविक अर्थ हैं।

ध्यान रखें जिन विद्वान् की हम चर्चा कर रहे हैं उनकी इस पुस्तक का प्रथम संस्करण १९८९ में छपा था। क्या संगठन और विद्वानों की स्वीकृति इसे मिल चुकी है? ये तो एक उदाहरण मात्र है, अन्य अनेकों विद्वानों के ऐसे प्रयास भी आज अन्यों के आक्षेप के घेरे में हैं।

भारतीय संविधान के प्रमुख निर्माताओं में से एक डॉक्टर बी.आर. अम्बेडकर का भारत में क्या स्थान है यह सभी जानते हैं। वे वेद मन्त्रों के अर्थ समझ सकते थे अथवा नहीं इस पर कुछ भी न कहते हुए यह अवश्य कहेंगे कि उन्होंने इस सन्दर्भ में अन्य टीकाकारों का अनुसरण किया परन्तु महर्षि दयानन्द का वेदभाष्य उन तक क्यों नहीं पहुँच सका? अथवा उस भाष्य को उन्होंने ध्यान देने योग्य न समझा, दोनों ही स्थितियों में दोष हमारा है। क्या ऐसी स्थितियों पर हमने कभी चिन्तन किया?

इस सम्बन्ध में उनके विचार उनकी किताब, 'अछूतः कौन थे और वे अछूत क्यों बने?' में हैं।

अम्बेडकर ने लिखा है, 'ऋग्वेद काल के आर्य खाने के लिए गाय को मारा करते थे, जो खुद ऋग्वेद से ही स्पष्ट है।'

उनके अनुसार ऋग्वेद में (१०/८६/१४) में इंद्र कहते हैं- 'उन्होंने एक बार ५ से ज्यादा बैल पकाए'। (नोट- इस मंत्र का महर्षि अर्थ नहीं कर पाए। प्रतीत होता है कि अम्बेडकर जी ने जिस भाष्य का अनुकरण किया वहाँ उक्षणः और पचन्ति शब्दों को देख कूदकर बैलों को पकाया यह अर्थ कर दिया। महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेद के प्रथम मंडल के सूक्त १६४ मन्त्र ४३ में **'उक्षणम अपचन्त'** का अर्थ किया है जिसका सम्बन्ध सींचने वाले मेघ से है।)

डॉ. अम्बेडकर आगे लिखते हैं- ऋग्वेद (१०/९१/१४) कहता है कि- 'अग्नि के लिए घोड़े, बैल, सांड, बांझ गायों और भेड़ों की बलि दी गई। ऋग्वेद (१०/७२/६) से ऐसा लगता है कि गाय को तलवार या कुल्हाड़ी से मारा जाता था।' (इसमें दूर-दूर तक भी गाय, कुल्हाड़ी और तलवार का वर्णन नहीं है। यहाँ भी अंतरिक्ष की घटनाओं का दिग्दर्शन है।)

डॉ. अम्बेडकर ने लिखा 'तैत्तरीय ब्राह्मण में बताई गई कामयेष्टियों में न सिर्फ बैल और गाय की बलि का उल्लेख है बल्कि यह भी बताया गया है कि किस देवता को किस तरह के बैल या गाय की बलि दी जानी चाहिए।'

यह प्रकरण बहुत लम्बा है जिसे पूरा देना आवश्यक नहीं है। ऊपर अम्बेडकर जी ने ऋग्वेद के कुछ मन्त्रों का

उल्लेख किया है जहाँ उस तरह की कोई चर्चा नहीं है। मांसाहार का लेशमात्र भी संकेत नहीं है। निष्कर्ष यही निकालता है कि अम्बेडकर जी तक आर्य विद्वानों वा महर्षि दयानन्द के भाष्य तक नहीं पहुँचे। क्यों? क्या इसका उत्तर आर्यसमाज की निष्क्रियता नहीं है? आज भी वेद के दयानन्दीय दृष्टिकोण को समाज में, विश्वविद्यालयों में मान्यता प्राप्त कराने के क्रम में आर्यसमाज द्वारा किया गया कार्य शून्य जैसा ही है। जो सर्वप्रथम कार्य था उस सन्दर्भ में आर्यसमाज के विद्वानों ने लेख लिखे तथा भाषण तो दिए परन्तु उनका प्रसारण अत्यन्त सीमित ही रहा। नतीजा हमारे सामने है। आज वेदों पर नाना प्रकार के आक्षेप लगाए जा रहे हैं, परन्तु आर्यसमाज में इसे लेकर कोई चिन्ता है? इस सम्बन्ध में क्या कोई सुनियोजित योजना बनाना सबसे अधिक आवश्यक नहीं है? अब आर्यसमाज के सदस्य स्वयं सोचें की वेद के पढ़ने-पढ़ाने को परमधर्म मानने वाले विद्वानों के मध्य यह अनर्थ क्योंकर जीवित है? क्या यह आर्य संगठनों और विद्वानों की परम निष्क्रियता पर मोहर नहीं लगा रहा?

सबसे गम्भीर प्रश्न यह है कि वेदों के सन्दर्भ में आर्य विद्वानों ने ही महर्षि दयानन्द के मत की धज्जियाँ उड़ा दी जैसा कि हमने ऊपर उदाहरण दिया, ऐसा क्योंकर सम्भव हुआ? संगठन सहित आर्य विद्वानों की और आर्यों की, अति निष्क्रियता इसकी जिम्मेदार नहीं है? यह तो एक विद्वान् की पुस्तक के कुछ अंश का वर्णन है। ऐसी स्थितियों की भरमार है। इसका निराकरण होगा कैसे? क्या किसी के पास कोई उपाय है?

सत्यार्थ प्रकाश कहीं से छपे, शब्दशः एक सा छपे यह तो हो न सका, वेदों के सन्दर्भ में यह हो जाएगा? अभी तो यह स्वप्न मात्र प्रतीत होता है। आर्य समाज में मंचशूरों की बात न करें तो वेद के आधिकारिक विद्वान् कितने हैं? अँगुलियों पर ही गिना जा सकता होगा, ऐसा हमारा विचार है। क्योंकि गुरुकुलों में तो वेद पढ़ाये नहीं जाते ऐसा हमें बताया गया है, और कॉलेजों में महर्षि दयानन्द का भाष्य उपेक्षित है तो हम यह आशा नहीं कर सकते कि दयानन्दीय शैली से भाष्य करने वाले विद्वान् पैदा हो रहे होंगे। जो कुछ थोड़े बहुत थे वो चले गए, कुछ आज हैं। क्या उनका उपयोग कर वेदार्थ की योग्यता रखने वाले विद्वानों के उपयोग की हमने कोई योजना बनायी है? यह सर्वोपरि समस्या मुँह बाए खड़ी है पर उपेक्षा का शिकार है। फिर वैदिक सिद्धान्तों की आलोचना का सप्रमाण उत्तर कौन देगा? करपात्री जी जैसे आक्रमण पर 'वेदार्थ कल्पद्रुम' का प्रणयन कौन करेगा? **Shining Aryasamaj** की योजना के मध्य रुककर इस दुरवस्था पर विचार करना अवश्य चाहिए। ऐसा न हो कि देर इतनी हो जाय कि फिर हाथ मसलने और पश्चाताप के अतिरिक्त हमारे पास कुछ न बचे। फौरी आवश्यकता यह है कि संगठन वेद के आधिकारिक विद्वानों को चिह्नित करे और तुरन्त योजना बनाकर उनके सान्निध्य में कुछ नवयुवक विद्वान् बनाने की योजना बनावे।

एक संगठन, शक्तिशाली संगठन, निष्पक्ष, दयानन्दी संगठन, जिसके सदस्य सत्य के प्रति समर्पित हों, वेद के प्रत्येक सिद्धान्त को जीवन में जीते हों, चाहे उनकी संख्या कम हो परन्तु आर्य समाज के स्वरूप की रक्षा हेतु आवश्यक हैं। आर्य समाज के उद्भट विद्वान् काल के गाल में समा गए, एक का भी substitute दिखायी नहीं देता। इस खालीपन को कैसे भरें? इस ओर, संगठन की जिन गत तीन चार बैठकों में, मैं उपस्थित हुआ एक में भी इस पर गंभीर विचार-विमर्श नहीं हुआ।

अराजकता की ओर अग्रसर समाज

जब आप एक संगठन बनाते हैं तो उसमें अनुशासन होना अनिवार्य होता है ताकि सभी चीजें नियम से चलें। परन्तु दुर्भाग्य देखिये सर्वाधिक अराजकता आर्यसमाज में ही देखने को मिल रही है। जिस समाज का प्रवर्तक तर्क ऋषि का आश्रय लेकर सम्पूर्ण विश्व को एक शाश्वत सत्य के नीचे लाकर खड़ा कर देना चाहता था आज

उसी के द्वारा स्थापित आर्यसमाज में सत्य गुटों पर आश्रित हो गया है। सत्य क्या है यह जानते हुए भी असत्य की बीन पर इसलिए नृत्य हो रहा है क्योंकि वह उनके मित्रों को अभिप्रेत है। आज जब कुरआन तथा बाइबिल विश्व में कहीं से छपे अक्षरशः एक जैसे मिलेंगे वहीं छः प्रकार के सत्यार्थप्रकाश बाजार में हैं, इससे ज्यादा हमारी अराजकता का क्या प्रमाण होगा? सैद्धान्तिक प्रश्नों पर कभी धर्मार्य सभा निर्णय लेती थी परन्तु धर्मार्य सभा की बात मानना अधिकारियों ने २१वीं शताब्दी के आरम्भ में ही छोड़ दिया। धर्मार्य सभा धीरे-धीरे निस्तेज हो गयी और आचार्य विशुद्धानन्द जी के निधन के पश्चात् सभा भी भूत हो गयी। महर्षि दयानन्द जी की प्रथम जन्म शताब्दी के अवसर पर धर्मार्य के साथ-साथ राजार्य तथा विद्यार्य सभा के गठन का संकल्प किया गया परन्तु वह पूर्ण नहीं हुआ कारण कि इसे कभी अत्यावश्यक माना ही नहीं गया।

धर्मार्य सभा का जब गठन किया गया तो उसके कार्य भी निश्चित किये गए थे।

१. वैदिक सिद्धान्त अथवा किसी भी धर्म सम्बन्धी विषय पर मतभेद होने की दशा में उसका निर्णय करना और आर्यजगत् के लिए निर्णायक व्यवस्था देना।
२. धर्म ग्रन्थों में प्रचलित पाठभेदों के सम्बन्ध में उचित निर्णय करके शुद्ध पाठ आदि की व्यवस्था करना।
३. ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थों का मूल लेख के अनुसार शुद्ध सम्पादन करना।
४. आर्य विद्वानों के लिखे हुए ग्रन्थों की देखभाल करके उनके शुद्ध और वेदानुकूल होने की व्यवस्था देना।
५. वैदिक सिद्धान्तों की रक्षा के लिए अन्य उचित उपायों का अनुष्ठान करना।

किसी विषय पर मतभेद होने पर दो तिहाई बहुमत से जो निर्णय होगा वह मान्य होगा। प्रथम धर्मार्य सभा के प्रधान महात्मा नारायण स्वामी थे।

जो कुछ भी हो सार्वदेशिक धर्माय सभा ने कभी अनेक सैद्धान्तिक विषयों पर निर्णय दिए जिन्हें आर्यों द्वारा माना भी गया। यज्ञ पद्धति, पर्व पद्धति आदि इसके उदाहरण हैं साथ ही सभा ने सैद्धान्तिक विचलन पर अच्छे अच्छे विद्वानों की क्लास भी लगाईं।

जहाँ तक मेरे ध्यान में है स्वामी सत्यानन्द जी, जो कि राम नाम की दीक्षा देने लग गए थे और गुरुडम महात्म्य की स्थापना भी कर रहे थे {क्या आज अनेकों आर्यसमाजस्थ विद्वान् ऐसा नहीं कर रहे हैं?) उनकी अच्छे से क्लास लगायी गयी अंततः उन्हें आर्यसमाज से पृथक् होना पड़ा। उसी प्रकार पण्डित विद्यानन्द विदेह से भी ऐसे ही मसलों में स्पष्टीकरण माँगा गया। उन पर आरोप थे कि वे स्वयं को ऋषि मानते थे और औरों को ऐसा कहने के लिए प्रेरित करते थे। उन्होंने ऋग्वेद भाष्य के लिए आर्यों से एक लाख रुपये की अपील की थी। उस समय संगठन की मजबूती का इससे अनुमान लगावें की सभा ने उनको वेद भाष्य करने से मना कर दिया। धर्मार्य सभा का निर्णय देखने योग्य है।

श्रीयुत् विद्यानन्द विदेह ने सार्वदेशिक धर्मार्य सभा में २६ जून १९५४ के अधिवेशन के सामने स्वीकार किया कि मेरी दर्शन में गति नहीं और मैं संस्कृत भी उतनी नहीं जानता। ऐसी स्थिति में पण्डित विद्यानन्द जी विदेह ने अपने ऋग्वेद भाष्य के प्रकाशन के लिए आर्य जनता से जो अपील १ लाख रुपये की है, सार्वदेशिक धर्मार्य सभा उसका घोर विरोध करती है और सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना करती है कि वह यथोचित् कार्यवाही अविलम्ब करे। इस सभा की निश्चित सम्मति है कि ऐसे व्यक्ति को वेद भाष्य करने का कोई अधिकार नहीं है।

लम्बा न लिखते हुए यही लिख देना पर्याप्त है कि- 'संगठन ने उनको आर्य समाज से एक प्रकार से बहिष्कृत करते हुए जो लिखा वह आज ध्यान देने योग्य है.... आर्यसमाज की शिक्षाओं, सिद्धान्तों और मन्तव्यों के विरुद्ध प्रचार करने में कोई आर्य स्वतन्त्र नहीं किया जा सकता आर्य समाज के सिद्धान्त उसके मन्तव्य और

सबसे बढ़कर उसका हित विदेह जी पर बलिदान नहीं किये जा सकते।' अर्थात् सिद्धान्तों की रक्षा प्रमुख है व्यक्ति कोई भी हो।

यह था कभी संगठन का जलवा। और आज महर्षि के कालजयी ग्रन्थ में वेदमन्त्र परिवर्तन करने पर सभा असहाय बैठी रही और आज भी है। न्याय को प्रवर्तित करने वालों का विरोध भी होगा यह तय है, परन्तु आर्य समाजों को सत्य की पटरी पर वेगवान बनाए रखना सर्वोच्च संगठन का कर्तव्य है। कर्तव्य पथ पर गरल पान भी करना पड़ता है, नीलकण्ठ बनना पड़ता है।

आर्य समाज का कलेवर बढ़े यह वांछनीय है, इसके प्रयास होने ही चाहिए परन्तु साथ ही आर्यसमाजस्थ लोग ऐसे हों जिनका शुद्ध चरित्र और व्यवहार तथा सबसे अधिक सिद्धान्तनिष्ठा लोगों को अनायास ही अपनी ओर आकृष्ट करले- कि ऐसा होता है आर्य समाजी।

आज सैद्धान्तिक क्षरण चरम पर है, क्या संगठन ने कभी इन विषयों अथवा समस्याओं पर चिन्तन किया है, शायद नहीं। उसका एक प्रमुख कारण यह भी है कि जिससे सवाल करेंगे वह तुरन्त कहेगा कि पहिले अपने गिरेबान में झाँको, आप बिखरे क्यों हैं? दूसरा इस मार्ग में अनेक लोग जिनके स्वार्थ वा अहम पर चोट लगेगी वे आपसे दूर हो जायेंगे इत्यादि। अतः सर्वप्रिय कार्य **shining Aryasamaaj** है, बड़े भव्य सम्मलेन हैं। अच्छा है परन्तु चित्ताकर्षक सम्मेलनों के पीछे मूल समस्याएँ जीवित हैं और समाधान चाह रही हैं जिसके अभाव में आर्यसमाज कुछ भी रहे आर्य समाज नहीं रहेगा।

ऐसे हम महत्वपूर्ण विषयों की उपेक्षा करते रहे हैं। संख्यात्मक की बात करें तो भी एक रचनात्मक पहल आर्य समाज द्वारा की गई थी पर आज वह भी नहीं है। महर्षि दयान्द ने अपने एक पत्र में लिखा है कि हमें अपना धर्म वैदिक और जाति आर्य लिखाना चाहिए। सभा ने १९३१ की जनगणना के समय निर्देश दिए थे कि सभी आर्यसमाजी अपना धर्म वैदिक और जाति आर्य लिखावें साथ ही राजनीतिक तथा प्रशासनिक स्तर पर इसे स्वीकृत कराया। परिणामस्वरूप एक पृथक् समूह के रूप में आर्य समाजियों को मान्यता मिली। फलतः ९९०२३३ लोगों ने अपने को आर्य लिखाया न कि वैश्य, ब्राह्मण आदि। क्या यह एक अच्छी पहल नहीं थी? आज की स्थिति क्या है पता नहीं। मैंने artificial intelligence की सहायता से २०११ की जनगणना में आर्यों की संख्या देखनी चाही पर निराशा हाथ लगी। सभा के पास आंकड़े हों तो बताने का श्रम करें।

कितना लिखूँ क्या-क्या लिखूँ? आर्यसमाज के एक प्रमुख अधिकारी व सज्जन पुरुष का ध्यान आता है। वे शराब के बड़े व्यापारी थे। सभी जन उनके प्रति आदर भाव रखते थे एवं उन्हें पदाधिकारी बना देते थे पर उन्हें अपने व्यवसाय को लेकर बड़ा संकोच होता था। हमसे जब उन्होंने अपने अन्तर्मन की बात कही तो हमने यही निवेदन किया कि वे पद स्वीकार न करें।

परन्तु आज कितने पदाधिकारी इन बातों पर ध्यान देते है? इसी कारण आर्यों की जो छवि बननी चाहिए नहीं बन पा रही। समय रहते इन स्थितयों का निराकरण होना चाहिए। 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' यह कहावत आर्यों पर चरितार्थ हो रही है। ईर्ष्या से ओत प्रोत हृदय जब राग-द्वेष त्यागने का प्रवचन देंगे तो क्या प्रभाव पडेगा? सुख सुविधाओं के अबाधित साम्राज्य का उपभोग करने वाले वैराग्य का उपदेश देंगे तो क्या प्रभाव पड़ेगा? अतः **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** का नारा लगाने की बजाय **'स्वयं आर्यम्'** को अपने जीवन में साकार करने की महती आवश्यकता है तभी स्थिति सुधर सकती है अन्यथा तो भविष्य दिख ही रहा है।

छपते-छपते- एक निष्ठावान् और कर्मठ आर्य नेता से दो प्रसंग ज्ञात हुए जिन्होंने स्पष्ट कर दिया कि आर्य समाज में स्थापित विद्वान्/नेता संन्यासी इसे किस दिशा में ले जा रहे हैं।-

१. एक भरी-पूरी सभा में एक आचार्य ने घोषणा की कि उन्होंने अपने विद्यार्थियों को ऐसी विद्या (?) सिखायी है जिससे वे आँख पर पट्टी बाँध उनके हाथ में स्पर्श कराये नोट का नम्बर बता सकते हैं और भरी सभा में यह करवा कर दिखाया।

२. दूसरे प्रसंग में आर्य समाज के चार Heavy Weight एक Heavy Weight संन्यासी से मिलने गए। उनके यहाँ कलम ने स्वयं ही चलकर उन आर्य नेताओं के बारे में कागज पर लिख दिया।

इन दोनों प्रसंगों में कुछ ऐसा ही प्रदर्शन किया गया जैसा आज आप जादू के शो में देखते हैं। प्रश्न यह नहीं है कि उन्होंने यह कैसे किया? प्रश्न यह है कि क्यों किया? क्या अपने को उच्च कोटि का योगी सिद्ध करने के लिए? जी नहीं। जो आर्य समाज के १५० वर्ष के इतिहास में आज तक नहीं हुआ, आज भरी सभाओं में मदारी के कारनामें जैसी प्रस्तुतियाँ वो भी उच्च पदस्थ आचार्यों द्वारा संकेत ही नहीं घोषित कर रही हैं कि आर्य समाज किस दिशा में जा रहा है और निश्चित यह मार्ग ऋषि को अभीष्ट नहीं हो सकता।

– अशोक आर्य
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, उदयपुर
चलभाष- ०९३१४२३५१०१, ०८००५८०८४८५

सत्यार्थ सौरभ की रजिस्टर्ड पोस्टल सेवा

सत्यार्थ सौरभ के सम्मानित सदस्यगण! हमें पता है कि आप लोगों को सत्यार्थ सौरभ पत्रिका या तो समय से नहीं मिलती है या फिर मिलती ही नहीं है। इसलिए न्यास ने एक निर्णय लिया है कि अगर आप एक वर्ष में रुपये 264/– (Postage हेतु) देते हैं तो आपको पत्रिका रजिस्टर्ड भेजी जाएगी। ताकि फिर भी पत्रिका प्राप्त नहीं होती है तो आप पोस्ट ऑफीस में शिकायत दर्ज करवा सकते हैं जिससे ये समस्या सुलझ सकती है।

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹११,०००)

श्री रतिराम शर्मा, श्री रामेश्वर दयालु गुप्त; गाजियाबाद, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री सुरेश चन्द्र आर्य, श्री दीनदयाल गुप्त, स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री भवानी दास आर्य, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री नारायण लाल मित्तल, श्रीमती आभा आर्या, श्रीमती शारदा गुप्ता, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, श्री सुधाकर पीयूष, आर्यसमाज गाँधीधाम, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, प्रो. आई. जे. भाटिया; नासिक, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती ओमप्रकाश वर्मा; जयपुर, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री दीपचन्द आर्य; बिजनौर, श्री खुशहालचन्द आर्य, गुप्तदान उदयपुर, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्री मोती लाल आर्य, श्री रघुनाथ मित्तल, श्री जयदेव आर्य, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, श्री नरेश कुमार राणा, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री वीरेन्द्र मित्तल, श्री विजय तायलिया, गुप्त दान दिल्ली, प्रो. आर.के.एरन, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टॉक, श्री विकास गुप्ता, श्री भारतभूषण गुप्ता, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी. एकेडमी, टाण्डा, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री एम.पी. सिंह, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री विवेक बंसल, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, श्री लोकेश चन्द्र टांक, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री प्रह्लादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव, डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरसेन मुखी, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए., श्री राजेन्द्र कुमार सक्सेना, कोटा, श्रीमती सुमन सूद, कन्डा घाट (सोलन), माता शीला सेठी, न्यूजर्सी, डॉ. एस. के. माहेश्वरी, उदयपुर, श्री राजेश तिवारी (शिक्षक), ग्वालियर, डॉ. पूर्णसिंह डबास, नई दिल्ली, श्रीमती सविता सेठी, चण्डीगढ़, श्री बृज वधवा, अम्बाला शहर, श्री हजारी लाल आर्य, उदयपुर, डॉ. सत्यप्रकाश, हरदोई, श्री राजेन्द्रपाल वर्मा, वडोदरा, प्रिन्सीपल डी. ए. वी. एच. जेड. एल. सी. सै. स्कूल, दरीबा (राजसमन्द), आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, होशंगाबाद, श्री ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, नोएडा, श्री भरत ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, अहमदाबाद, श्री सुरेन्द्र कर्मचन्दानी, पुणे, डॉ. आनन्द कुमार शर्मा, नई दिल्ली, श्री रमेश चन्द्र गुप्ता, यू.एस.ए., श्री शुद्धबोध शर्मा; श्रीगंगानगर, श्री कन्हैया लाल आर्य, शाहपुरा, डॉ. सत्या पी. वार्ष्णेय; कनाडा, श्री अशोक कुमार वार्ष्णेय; बडोदरा, श्री नागेन्द्र प्रसाद गुप्ता, बगहा (बिहार), श्री गणेशदत्त गोयल, बुलन्दशहर (उ. प्र.), श्री पूर्णचन्द आर्य, कानोड़, श्री वेदप्रकाश आर्य; नई दिल्ली, श्री सत्यनारायण शर्मा; उदयपुर, श्रीमती राधा देवी-रतन लाल राजोरा; निम्बाहेड़ा, श्री सत्यप्रकाश शर्मा; उदयपुर, सुदर्शन कपूर; पंचकूला, श्री देवराज सिंह; उदयपुर, श्रीमती ललिता मेहरा; उदयपुर, श्री कृष्ण लाल डंग आर्य; हिमाचल प्रदेश, श्री जी. राजेश्वर (गौड़) आर्य; हैदराबाद, पुरुषोत्तम लाल मेघवाल; उदयपुर, श्री बलराम जी चौहान; उदयपुर, श्री राकेश जैन; उदयपुर, श्रीमती कमलकान्ता सहगल; पंचकूला, श्री अम्बालाल सनाढ्य; उदयपुर, श्री भँवर लाल आर्य; उदयपुर, श्री वेलजी धनजी भाई; महाराष्ट्र, श्री सज्जनसिंह कोठारी; जयपुर, श्री चेतन प्रकाश आर्य; जोधपुर, ठाकुर जितेन्द्र पाल सिंह; अलीगढ़, श्री घनश्याम शर्मा; जयपुर, श्री मानसिंह चौहान; डूंगरपुर, श्री अजय कुमार गोयल; पानीपत, श्री रामजीवन मिश्र; जयपुर, श्रीमती ममता आर्या; नई दिल्ली, श्री यश आर्य; कोलकाता, श्रीमती संचिता जैन; उदयपुर, श्रीमती कुसुम गुप्ता; सूरत, डॉ. बी.पी. भटनागर; उदयपुर, डॉ. अवन्त कुमार सचेती; उदयपुर

अभेद्य वेद–किसे अपना शत्रु मानें?

[वेदों पर किए प्रत्येक आक्षेप का उत्तर–आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक द्वारा]

आक्षेप संख्या–३ (वेद आतंक की शिक्षा देते हैं)

अपघ्नन्तो अराव्ण:

Atharva Veda 5.21.3' Let this war drum made of wood, muffled with leather straps, dear to all the persons of human race and bedewed with ghee, speak terror to our foemen," -Tr. Vaidyanath Shastri

वानस्पत्य: संभृत उस्त्रियाभिर्विश्वगोत्र्य:।
प्रत्रासममित्रेभ्यो वदाज्येनाभिघारित:॥

भाष्य–हे दुन्दुभे! नक्कारे! तू जिस प्रकार (वानस्पत्यः) लकड़ी का बना हुआ होकर भी (उस्त्रियाभिः संभृतः) चाम के तस्मों से जकड़ा हुआ (विश्वगोायः) समस्त जन का बन्धु है। वह (अमित्रेभ्यः) शत्रुओं के लिये। (आज्येन अभि-घारितः) घृत द्वारा अभिषिक्त होकर (प्रत्रासं वद) भय और आतंक बतला।

आक्षेप का उत्तर–

यह मन्त्र इस प्रकार है-

वानस्पत्य: संभृत उस्त्रियाभिर्विश्वगोत्र्य:।
प्रत्रासममित्रेभ्यो वदाज्येनाभिघारित:॥ - अथर्व.५/२१/३

इस मन्त्र से उपर्युक्त भाष्यकारों ने शत्रुओं को आतंकित करने का वर्णन किया है। यद्यपि यह भाष्य नहीं है, अपितु मात्र सरल अनुवाद है, जो मन्त्र के अभिप्राय को उचित रीति से दर्शाने में सक्षम नहीं है। हम पूर्ववत् यहाँ फिर कहना चाहेंगे कि वेद का अनुवाद नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि समुचित भाष्य किया जाना चाहिए। पुनरपि इसमें आपको (सुलेमान रिजवी को) क्या आपत्ति प्रतीत होती है? जब दो सेनाओं में युद्ध होता है, तब शत्रु को आतंकित करने की बात तो क्या, उसे तो नष्ट ही किया जाता है। इसी का नाम युद्ध है, जो धर्मात्माओं और पापियों के बीच सदा से चलता आया है। यहाँ महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि किसे अपना शत्रु मानना चाहिए? महर्षि दयानन्द ने स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में मनुष्यत्व का लक्षण बताते हुए लिखा है-

'मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं- कि चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों- उनकी रक्षा उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान् भी हो, तथापि

उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहाँ तक हो सके, वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें परन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पृथक् कभी न होवें।'

अब कोई बताये कि मनुष्य की इससे अधिक न्यायसंगत, तर्कसंगत एवं कल्याणकारिणी परिभाषा और क्या हो सकती है? जो व्यक्ति अपने बल के अहंकार में जनसाधारण अथवा विभिन्न पशु-पक्षियों को दुःख देता है, उसको कोई भी सज्जन व्यक्ति अपना शत्रु क्यों न समझे? ऐसे दुष्ट व्यक्ति ही सम्पूर्ण विश्व में अराजकता फैलाते हैं। इनको जितना अधिक सहन किया जायेगा अथवा इनके प्रति जितना अधिक तटस्थ रहा जायेगा, उतनी ही अधिक इस समाज, राष्ट्र वा विश्व में हिंसा, अराजकता और अशान्ति फैलेगी। इस कारण ऐसे बर्बर लोगों को शान्ति और मानवता की स्थापना करने के लिए अवश्य ही नष्ट कर देना चाहिए। तब यदि ऐसे शत्रुओं को दण्ड देने की प्रार्थना वेद में हो, तो उसकी निन्दा कोई अराजक और उपद्रवी तत्त्व ही कर सकता है। अब हम इस मन्त्र का अपना अर्थ प्रस्तुत करते हैं।

इसका भाष्य इस प्रकार है-

आधिदैविक भाष्य– यह पाठकों के लिए पुस्तक रूप में ही भविष्य में उपलब्ध हो सकेगा।

आधिभौतिक भाष्य– **(वानस्पत्यः)** [**वनम्= रश्मिनाम** (निघं.१/५), यह पद **'वन शब्दे', 'वन संभक्तौ'** एवं **'वनु याचने'** धातुओं से व्युत्पन्न है। **वनस्पतिरेव वानस्पत्यः**] प्रजा द्वारा वांछित अन्न-धनादि पदार्थों का राष्ट्र में समुचित वितरण करने वाला, विद्या के प्रकाश से प्रकाशित सत्योपदेष्टा राजा **(विश्वगोत्र्यः)** राष्ट्र की प्रजा के सभी कुलों में अपने हितकारी कार्यों द्वारा सदैव विद्यमान अर्थात् समस्त प्रजा का हितचिन्तक **(उस्रियाभिः, संभृतः)** गौ आदि उपकारी पशुओं के द्वारा तथा नाना प्रकार की निरापद किरणों वा ऊर्जा के द्वारा राष्ट्र को सम्यक् रूप से धारण करने वाला **(अमित्रेभ्यः, प्रत्रासम्, वद)** राष्ट्रविरोधी तत्त्वों और समाज कण्टकों के विरुद्ध कठोर दण्ड का आदेश देवे। **(आज्येन, अभिधारितः)** जैसे घृत से सिंचित समिधाएँ जलकर नष्ट हो जाती है, वैसे ही तेजस्वी राजा हिंसक और क्रूर अपराधियों को नष्ट कर दे।

भावार्थ– वेदविद्या का महान् ज्ञाता राजा अपनी प्रजा के लिए अन्न-धन आदि पदार्थों के न्याय-संगत वितरण की व्यवस्था करता है। सुख चाहने वाला कोई भी राष्ट्र गौ आदि उपकारी पशुओं को अपना आर्थिक आधार बनाता है और इसी क्रम में सबसे निरापद और शुद्ध पेशीय ऊर्जा का उपयोग करता है। इसके अतिरिक्त उस ऊर्जा का ही उपयोग करता है, जो पूर्णतः निरापद हो। राजा अपनी प्रजा के लिए माता-पिता के समान हितकारी होना चाहिए, जो प्रजा के लिए भय का कारण बने, उसे राजा नष्ट कर देवे। वह राजा पर्यावरण शोधनार्थ गोघृत आदि उत्तम पदार्थों से नित्य यज्ञ भी करने और कराने वाला हो एवं जिस प्रकार घृत की आहुति से अग्नि तेजस्वी होने लगता है, उसी प्रकार राजा भी ब्रह्मचर्यादि व्रतों और योगाभ्यास आदि से तेजयुक्त होवे।

आध्यात्मिक भाष्य– **(वानस्पत्यः)** प्राणविद्या का ज्ञाता और प्राणों को वश में रखने वाला योगाभ्यासी **(उस्रियाभिः, संभृतः)** वेद की ऋचाओं के द्वारा स्वयं को सम्यक् रूप से पुष्ट करता है और वह निरन्तर वेद की ऋचाओं में ही स्थित होता है। **(विश्वगोत्र्यः)** वह किसी कुल वा वंश विशेष का न होकर प्राणिमात्र के हित में ही लगा रहता है। **(अमित्रेभ्यः, प्रत्रासम्, वद)** वह योगी योगसाधना में बाधक चित्त वृत्तियों को अपनी अन्तश्चेतना द्वारा प्रतिबन्धित रहने का आदेश दे अर्थात् मन में आने वाले विकारों को बलपूर्वक प्रतिबन्धित करने का प्रयास करे। **(आज्येन, अभिधारितः)** [**आज्यम् =**

प्राणो वा आज्यम् (तै.३/८/१५/२३), **यज्ञो वा आज्यम्** (तै.३/३/४/१)] ऐसा योगी अपने प्राणायामादि तपों के द्वारा प्राण बल को बढ़ाता हुआ परब्रह्म परमात्मा के साथ संगत होने का प्रयत्न करते हुए परहित की भावना से स्वयं को निरन्तर सिंचित करता रहे अथवा वह यज्ञस्वरूप परब्रह्म परमात्मा के प्रति प्रीति भावना से स्वयं को निरन्तर सिंचित करता रहे।

भावार्थ– प्राण को वशीभूत करने वाला योगी सदैव वेद की ऋचाओं में रमण करता है। वह प्राणिमात्र के आत्मा निरन्तर ईश्वर का वास अनुभव करता हुआ सदैव उनका हितचिन्तन करता है। उसके मन में जब भी कोई विकार उत्पन्न होने वाला होता है, तब वह अपने मन को आदेश देकर बुरे विचारों को बाहर ही धकेल देता है। योगी का आत्मबल बहुत प्रबल होता है, क्योंकि वह सदैव ही स्वयं को ईश्वराधीन अनुभव करता है।

इन भाष्यों को पढक़र कोई भी वेदविरोधी यह बताये कि उसको इन भाष्यों पर क्या आपत्ति है?

लेखक- आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक
श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास, वेद विज्ञान मन्दिर
भागलभीम, भीनमाल, चलभाष- ९४१४८३४४०३

विश्व भर से आने वाले पर्यटकों के नवलखा महल, उदयपुर के बारे में विचार

आज नवलखा महल आकर मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ। मैं हर व्यक्ति से आग्रह करूँगा की अगर आप कभी भी घूमने जाते हैं तो कृपया उदयपुर जरूर आएँ व नवलखा महल आना मत भूलिये। वैसे तो उदयपुर बहुत ही सुन्दर जगह है, परन्तु नवलखा तो उससे कई गुना ज्यादा सुन्दर व प्रेरणादायक स्थल हैं। नई पीढ़ी के लिए बहुत आवश्यक है क्योंकि ऐसी बहुत सारी चीजें जो आजकल हमें गलत बताई जाती है जैसे हनुमान जी का बन्दर होना, कृष्ण जी का गोवर्धन पर्वत उठाना व ऐसे बहुत सारे पाखण्ड हमारे समाज में आज लोगों भ्रमित कर रहे हैं। नवलखा उसे दूर कर रहा है और सबसे अच्छी बात यह है कि यहाँ जो गाईड हैं वो बहुत ही अच्छे तरीके से बताते हैं। हम यहाँ के दोनों गाईड का धन्यवाद जो हमें इतना अच्छा बताया।

– अविनाश गुर्जर; हैदराबाद

आज दिनांक १६ मई २०२४ को गुलाबबाग स्थित नवलखा महल में आकर बहुत अच्छा लगा। जिस प्रकार नवलखा महल में आकर यहाँ के गाईड द्वारा जो जानकारी दी गई बहुत अच्छी लगी। भविष्य में उम्मीद करता हूँ कि बाहर से आने वाले अथितियों को और यहाँ के स्थानीय लोगों को इस महल के बारे में जानकारी दूँगा और कोशिश करूँगा यहाँ उनको लाके इस सांस्कृतिक केन्द्र के बारे में जानकारी प्रदान कर सकूँ। यहाँ के सभी सदस्यों एवं कार्यकर्त्ताओं का आभार/धन्यवाद।

– हेमराज सोनवाल

दान की अपील

सत्यार्थ प्रकाश रचना स्थली नवलखा महल से NMCC के रूप में सत्यार्थ शिक्षाओं को जिस अद्भुत प्रकार से प्रसारित किया जा रहा है और सहस्रों लोग आकर्षित हो इसका लाभ ले रहे हैं जिस कारण से यह स्थल अब विख्यात होता जा रहा है। आपसे प्रार्थना है कि इस यज्ञ में अपनी छोटी–बड़ी आहुति अवश्य देने की कृपा करें। इस हेतु साथ में दिए यूपीआई कोड का भी आप इस्तेमाल कर सकते हैं। बस एक अनुरोध है कि अगर आप अर्थ सहयोग प्रदान करें तो चलभाष 9314235101, 7976271159 अथवा 9314535379 पर सूचित अवश्य करें।

G Pay

BHIM UPI

आजीवन सत्यार्थ मित्र

सत्यार्थमित्र योजना में प्रतिवर्ष 5100 रुपए देने के क्रम में कुछ बन्धु प्रतिवर्ष रिन्यूअल कराने के झंझट से विरत रहना चाहते हैं, अतः न्यास ने अपनी पिछली बैठक में यह निश्चय किया है कि आजीवन सत्यार्थमित्र के रूप में जो भाई बहिन रु.51000 एकमुश्त जमा करा दें तो उनका यह सहयोग आजीवन सत्यार्थमित्र के रूप में मान्य होगा। समर्थ आर्यजन इस दिशा में सकारात्मक सहयोग करने का श्रम करें।

श्री खुशहाल चंद आर्य

चोरी की विस्तृत व्याख्या

जन साधारण किसी वस्तु, किसी जेवर या रुपये-पैसों को किसी के बिना पूछे या किसी की अनुपस्थिति में कोई व्यक्ति उठा लेता है और सन्देह वाले व्यक्ति से पूछने पर वह इन्कार कर देता है, तब हम उस वस्तु की चोरी हो गई कह देते हैं, और मालूम पड़ने पर उस वस्तु को उठाकर ले जाने वाले को चोर कह देते हैं। चोरी के लक्षण यह हैं कि जिस व्यक्ति की वस्तु चोरी हुई उसको हानि होने से दुःख, चिन्ता और कष्ट होता है, और पाने वाले को प्राप्ति से प्रसन्नता और खुशी होती है। इसको हमें 'प्रत्यक्ष चोरी हुयी' कहनी चाहिए। कई किस्म की परोक्ष चोरियाँ भी होतीं हैं जो प्रत्यक्ष चोरी से कहीं ज्यादा हानिकारक व विनाश कारक होतीं हैं। परोक्ष चोरियों का विवरण लिखूँ इससे पहले यह बता देना उचित है कि जो धन बिना शारीरिक व बौद्धिक परिश्रम के प्राप्त होता है उसे चोरी का ही धन समझना चाहिए। वह प्रत्यक्ष में हो चाहे परोक्ष में। प्रत्यक्ष की चोरी तो सिर्फ धन व वस्तु की ही होती है परन्तु परोक्ष की चोरियाँ निम्नलिखित किस्म की होती है-

१. समय की चोरी - एक बस में ६०-७० व्यक्ति बैठे हैं और ड्राइवर अधिक सवारियाँ चढ़ाने के लोभ में बस को जहाँ दो मिनट रोकना चाहिए वहाँ ८-१० मिनट रोकता है। वह ५०-६० व्यक्तियों के समय की चोरी करता है, और अपने कर्तव्य से भी च्युत होता है। उन व्यक्तियों में किसी को अपने कार्यालय में समय पर पहुँचना है, किसी को कोर्ट में हाजिर होना है, किसी को हॉस्पीटल जाना है तो आप ही सोचे उनको कितना नुकसान व परेशानी उठानी पड़ेगी। ड्राइवर तो यह समझ रहा है कि मैं किसी प्रकार की चोरी नहीं कर रहा हूँ जबकि वह ५०-६० मुसाफिरों के समय की चोरी ५-१० सवारियों को उठाने के तुच्छ लोभ के लिए कर रहा है। वास्तव में यह समय की चोरी प्रत्यक्ष चोरी से कहीं अधिक हानिकारक है।

२. कर्त्तव्य की चोरी- अकसर बैंकों में हम देखते हैं कि रुपये लेने वालों और देने वालों की बड़ी लम्बी लाइन लगी हुई होने पर भी रुपये लेने व देने वाला

कर्मचारी या अधिकारी अपने किसी मित्र से गप्पें मार रहा है या चाय की चुस्की ले रहा है। उसको इतने लोगों के खड़े होने की कोई परवाह नहीं। वह खड़े हुए व्यक्तियों के समय की चोरी तो कर ही रहा है साथ ही वह अपने कर्त्तव्य की भी चोरी कर रहा है। कर्त्तव्य की चोरी सबसे भयंकर चोरी है जिससे समाज, राष्ट्र व मानवता का सबसे अधिक नुकसान होता है । कर्त्तव्य पालन करना धर्म का पालन करने के समान होता है। जिस देश में कर्त्तव्य की चोरी होती है वह देश कभी भी उन्नति व समृद्धि को प्राप्त नहीं कर सकता। यह कर्त्तव्य की चोरी सिर्फ बैंकों में ही नहीं, हॉस्पीटल, रेलवे, पोस्ट ऑफिस, इनकम टैक्स व सेल टैक्स ऑफिस आदि सभी जगहों पर देखने को मिलती है।

३. भविष्य की चोरी - देहाती स्कूलों में ही नहीं, शहरी स्कूलों में भी अध्यापक बच्चों को पढ़ाने में बड़ी लापरवाही करते हैं। देहातों में तो बच्चों से घर पर काम भी करवाते हैं और पढ़ाने में भी कोई ध्यान नहीं देते। शहरों में जो बच्चे अध्यापकों से ट्यूशन करवाते हैं उन पर अध्यापक पढ़ाने का कुछ ध्यान देते हैं बाकी बच्चों पर कोई ध्यान नहीं देते। ऐसे अध्यापक कर्त्तव्य की चोरी तो करते ही हैं साथ ही विद्यार्थियों के भविष्य से खिलवाड़ करके उनके भविष्य व भाग्य की चोरी भी करते हैं। यदि अध्यापक वर्ग अपने कर्त्तव्य भाव से बच्चों को पढ़ावें और उनके समय को नष्ट न करें तो उन्हीं बच्चों में देश का राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, शीर्ष वैज्ञानिक, मिलिट्री का कैप्टन और बहुत बड़ा लेखक व कवि जो उन्हीं में छिपे हुए हैं, निकल सकते हैं। इसलिए अध्यापकों का कर्त्तव्यभाव से न पढ़ाना भी विद्यार्थियों के भविष्य व भाग्य की चोरी है। इस चोरी के नुकसान का अनुमान लगाना भी असम्भव है।

४. रिश्वत व भ्रष्टाचार के रूप में चोरी- एक रेलवे का टी.टी. किसी व्यक्ति से रिजर्व बर्थ के लिए जो चार्ज करता है उसके अतिरिक्त उससे सौ या दो सौ रुपये रिश्वत के रूप में लेता है वह भी चोरी है, कारण इसमें परिश्रम नहीं लगता और दूसरे की लाचारी का फायदा उठाना है। इसी प्रकार की रिश्वत पुलिस वाले, सेलटैक्स वाले, इनकम टैक्स वाले, सरकारी अधिकारी और नेता व मन्त्री भी लेते हैं। वे सब इसी चोरी की श्रेणी में आते हैं। जिसको हम भ्रष्टाचार की संज्ञा देते हैं।

५. देश की गद्दारी भी चोरी- जो दवाई के दुकानदार असली दवाई की जगह बहुत लाभ के लिए नकली दवाई बेचते हैं। वे देश के सबसे बड़े गद्दार हैं और यह सबसे भयंकर चोरी है। कोई व्यक्ति अपने मरीज के लिए अच्छी दवाई समझकर पूरी कीमत देकर किसी दुकानदार से ले जाता है और वह दवाई लाभ की जगह हानि करती है और वह मरीज मृत्यु का ग्रास बन जाता है। वह दुकानदार देश व मानवता के प्रति कितनी बड़ी गद्दारी करता है इसका अनुमान लगाना भी कठिन है। इसी प्रकार चाय, मसाला, घी, दूध आदि में मिलावट करने वाले भी देश व मानवता के गद्दार हैं।

६. परिश्रम की चोरी- किसी फर्म के नौकर व कर्मचारी मालिक की अनुपस्थिति में काम नहीं करते। परस्पर बैठकर खेल, सिनेमा आदि की बातें करते हैं या किसी बहाने से बाहर घूमते हैं या सोते हैं। वे

अपना परिश्रम जो फर्म के काम में लगाना चाहिए था जिसकी वनिस्पत वे नौकरी पाते हैं, उस परिश्रम की वे चोरी करते हैं। साथ ही अपने कर्त्तव्य की चोरी भी

करते हैं। यही कारण है आज अधिकतर उद्योग धन्धे, कल-कारखाने घाटे में चल रहे हैं। जुआ व लॉटरी भी चोरी ही है कारण यह भी बिना परिश्रम किए धन प्राप्त करने के रास्ते हैं।

७. लाचारी का लाभ उठाने की चोरी- कोई व्यक्ति अपने मरीज को हॉस्पीटल में भर्ती करवाने के लिए टैक्सी करता है। यदि उसकी लाचारी को देखकर टैक्सी वाला रेट से अधिक रुपये लेता है तो उसने जितने रुपये अधिक लिए हैं, उतने रुपयों की उसने चोरी की है। एक ग्रामीण व्यक्ति शहर में आता है और उससे यदि टैक्सी, टैम्पू या रिक्शा वाला उसके भोलेपन या अनजानपन का अनुचित लाभ उठाकर

सही भाड़ा ५ रुपये की जगह २० रुपये या २० रुपयों की जगह ५० रुपये लेता है तो वह सही भाड़े से जितना अधिक ले रहा है उतनी ही की चोरी कर रहा है। इसी प्रकार दुकानदार अपने ग्राहक से डॉक्टर अपने मरीज से और वकील अपने क्लाईंट से उसकी विवशता का लाभ उठाकर अधिक रुपये लेते हैं तो वे भी इसी चोरी के भागी हैं।

यह मेरे देश का दुर्भाग्य है कि इस समय यह सब किस्म की चोरियाँ मेरे राष्ट्र में अधिक हो रही हैं तभी देश नैतिकताहीन होकर दिवालिया होता जा रहा है। इस ऋषि-मुनियों की पवित्र भूमि पर जहाँ हरिश्चन्द्र व युधिष्ठिर जैसे सत्यवादी, राम और कृष्ण जैसे महापुरुष, कर्ण और भामाशाह जैसे दानी, लक्ष्मण और शिवाजी जैसे चरित्रवान, हनुमान और भीष्म जैसे ब्रह्मचारी, विदुर व चाणक्य जैसे नीतिवान, बुद्ध और गाँधी जैसे अहिंसावादी, आदि शंकराचार्य और महर्षि दयानन्द जैसे विद्वान्, दधीचि और लालबहादुर शास्त्री जैसे त्यागी और ईमानदार पैदा हुए हों उस देश में इतना अधिक भ्रष्टाचार और इतनी अधिक चोरी जो पशुओं के चारे को भी खा जाते हों जो गरीबों और मरीजों के लिए सरकारी और विश्व बैंक से सहायता के रूप में आने वाली राशि को यहाँ के नेता और उच्च अधिकारी जरूरतमन्द के पास पहुँचने से पहले ही हजम कर जाते हों उस देश की ऐसी दयनीय दशा क्यों न बने, यह विचार करने का विषय है।

इसमें मुझे तो अपने देश के नेताओं के द्वारा हमारी प्राचीन गुरुकुल शिक्षा पद्धति, वर्णाश्रम व्यवस्था, पंचमहायज्ञों का परित्याग, गोमाता की हत्या को बन्द न करना, नशीली वस्तुओं का प्रचलन रखना और वैदिक पथ से भटक जाना तथा पश्चिमी सभ्यता को अंगीकार करना, इस पतन का मुख्य कारण जान पड़ता है।

देश का पतन तो हमें स्पष्ट ही दिखाई देता है कि सरकार अपने साथ गुण्डे, बदमाशों, डकैतों, हत्यारों, असमाजिक तत्वों को मिलाकर सरकार चलाने में अपने आपको गौरवान्वित समझती हो और कहती हो कि हम पाँच वर्ष की अवधि पूरी करेंगे यह कहना ही नेताओं की पदलोलुपता का और देश कहाँ तक पतन की ओर बढ़ चुका है प्रमाणित करता है। प्राचीन काल में यहाँ के राजा अश्वपति ने यह घोषणा की थी।

'न मे स्तनो जनपदे न कदर्यो, न मद्यपो।
नानाहिताग्निः ना विद्वान्, न स्वैरी - स्वैरिणी कुतः'

मेरे देश में कोई चोर नहीं, कोई कंजूस नहीं, कोई मद्य पीने वाला नहीं, अग्निहोत्र न करने वाला कोई नहीं, अविद्वान्-अनपढ़ कोई नहीं, व्यभिचारी कोई नहीं व्यभिचारिणी तो हो ही कैसे सकती है। दुःख है उस "आर्यावर्त्त" (हमारे देश का प्राचीन नाम) की आज यह दयनीय हालत हो गई।

- मेसर्स गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स
१८०, महात्मा गाँधी रोड, दोतल्ला
कोलकाता- ७००००७, चलभाष- ९८३६१११११७

विशेषकर विद्यार्थियों से

प्रिय विद्यार्थियो! यह जानना बहुत जरूरी है कि स्कूल या यूनिवर्सिटी का सिलेबस या पाठ्यक्रम जीवन का पाठ्यक्रम नहीं है। इसे जीवन का पाठ्यक्रम समझना बड़ी भूल होगी। यह भूल जीवन के पाठ्यक्रम की रेलगाड़ी को पटरी से उतार सकती है और अनेक स्थितियों में उतार भी रही है। शिक्षा में पाठ्यक्रम के प्रायः दो लक्ष्य होते हैं, एक तो यह कि उस पाठ्यक्रम में निर्धारित विषयों को पढ़कर आप रोजी-रोटी कमाकर जीवन को कायम रख सकें अर्थात् उसके अस्तित्व को बनाए रख सकें। दूसरा यह कि जिन विद्यार्थियों की उन विषयों में से किसी में गहरी रुचि बन जाए तो वे उस ज्ञान को आगे बढ़ाकर संसार के लिए और अधिक उपयोगी बना सकें। लेकिन इस सन्दर्भ में यह सावधानी रखने की जरूरत है कि यह ज्ञान जीवन-जीने का ज्ञान नहीं है। यह उस विषय की गहराई में तो खूब जाता है लेकिन यह जीवन-मूल्य नहीं सिखाता, जीवन-जीने की कला नहीं सिखाता जिसके अभाव में भौतिक साधनों की प्राप्ति के बावजूद व्यक्ति का मन अनेक विकारों से ग्रस्त हो सकता है। ऐसी हालत में यह बहुत ही आवश्यक है कि विद्यार्थी विषय की जानकारी के साथ-साथ जीवन-जीने की कला भी सीखें, मानवीय-मूल्यों की जानकारी भी सीखें ताकि विषय के विद्वान् होने के साथ आप एक अच्छे मनुष्य भी बन सकें।

हमारे आचार्यों ने मनुष्य को सजग करते हुए कहा है- 'मनुर्भव' अर्थात् 'मनुष्य बन'। इसका संकेत यह है कि जन्म से बेशक हम मनुष्य हैं लेकिन अगर हमारे भीतर मानवीय गुण नहीं हैं, हम पास-पड़ौस, समाज और राष्ट्र के लिए अपेक्षित अपने कर्त्तव्य के प्रति सजग नहीं हैं, दीन-दुःखी के प्रति संवेदनशील नहीं हैं, हममें सदाचार की कमी है तो हम एक अच्छे इन्सान नहीं हैं। आजकल अंग्रेजी का लाइफ-स्टाइल (Life Style) शब्द बहुत प्रचलित हो रहा है। जब हम किसी के 'लाइफ स्टाइल' के बहुत ऊँचा होने की बात करते हैं तो हमारा ध्यान केवल उसके भौतिक साधनों, उसके बढ़िया सुसज्जित घर, उसकी वेश-भूषा तथा उसकी गाड़ियों आदि पर होता है। किसी के ऊँचे लाइफ-स्टाइल के बारे में हमारा ध्यान, कर्त्तव्य के प्रति उस व्यक्ति की निष्ठा, उसके विवेक, उसकी ईमानदारी, उसकी सहृदयता, सहानुभूति तथा प्रलोभनों आदि पर काबू पा लेने की उसकी मानसिक

शक्ति पर नहीं जाता। इन सबकी कमी के बावजूद हम केवल उसके रहन-सहन या बाहरी वैभव के आधार पर उसे सम्मान की दृष्टि से देखने लगते हैं या उससे प्रभावित हो जाते हैं। हमें यह समझना होगा कि 'रहन-सहन की शैली और जीवन की शैली' में बहुत बड़ा भेद है। एक का सम्बन्ध बाहरी जीवन की सज्जा से होता है और दूसरी का भीतरी जीवन के संस्कार-परिष्कार से। इसी प्रसंग में किसी ने अंग्रेजी में भी कहा है - 'There is a great difference between style of Living and style of Life'. ऐसी स्थिति में विशेषरूप से, विद्यार्थियों से मेरा आग्रह है कि वे अपनी शिक्षा प्राप्ति के दौरान जीवन-जीने की कला पर भी ध्यान दें ताकि भौतिक साधनों की प्राप्ति के बावजूद अनेक मनुष्यों के जीवन में जो आपाधापी मची रहती है, अधिक से अधिक बटोरने की इच्छा बनी रहती है, द्वेषपूर्ण प्रतिस्पर्धा रहती है और परिणाम-स्वरूप अशान्ति रहती है उससे बचा जा सके और इसके स्थान पर जीवन में संतुष्टि, उल्लास और आनन्द का वास हो सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आपको रविवार को या किसी अन्य दिन जब भी ऐसा अवसर मिले तो ऐसे स्थान पर जाना चाहिए जहाँ जीवन मूल्य सिखाने की चर्चा होती हो या प्रवचन होते हों। आपकी जानकारी के लिए यह भी निवेदन कर दूँ कि रविवार के दिन ऐसे सबसे ज्यादा अवसर आर्य समाज की संस्थाएँ प्रदान

करती हैं जिनमें प्रत्येक रविवार को सुबह के समय हवन और प्रवचन का कार्यक्रम या सत्संग होता है। सत्संग का अर्थ होता है अच्छे लोगों या विद्वानों का साथ। अगर आप विद्वानों के पास जाएँगे तो अच्छे विचार मिलेंगे, अच्छा जीवन जीने की प्रेरणा मिलेगी और बहुत सारी बुराइयों से, जो बिना बुलाए ही हमारे पास आ जाती है, बच जाएँगे। यहाँ पर जहाँ आपको अच्छे विचार मिलेंगे वहाँ भारतीय चिन्तन से परिचित होने का अवसर भी मिलेगा। इस कार्यक्रम में एक-डेढ़ घण्टा बिताकर आप पूरे दिन अपनी दिनचर्या के अनुसार कार्य कर सकते हैं। आर्य समाज या कहिए आर्य समाज मन्दिर पूरे देश में हैं। दिल्ली जैसे महानगर में तो लगभग ३०० आर्य समाजें हैं। आप किसी निकटवर्ती आर्य समाज की जानकारी, पास-पड़ौस में किसी से पता कर लें, या नेट पर देख लें। आर्य समाज के विषय में सारी जानकारी नेट पर उपलब्ध है।

इस प्रसंग में आर्य समाजों के अधिकारियों से भी आग्रह है कि जब भी कोई नया युवक आप की समाज में आए उसके साथ विशेष स्नेह का व्यवहार करें और भविष्य में भी आते-रहने का निवेदन करें। उसके जाते समय, विशेष आत्मीयता दिखाते हुए सद्विचारों की कोई सरल पुस्तक भेंट करें। इसके साथ ही समाज के विद्वानों या उपदेशकों से भी अपेक्षा है कि वे रविवारीय सत्संगों में अपने प्रवचनों को सरल, सारगर्भित व व्यावहारिक बनाने का प्रयास करें और साथ ही उन्हें संस्कृत शब्दों के अनावश्यक प्रयोग द्वारा बोझिल बनाने से बचें।

याद रखें कि यदि कोई युवा आपकी आत्मीयता, प्रवचन के विषय और उसकी रोचक शैली से प्रभावित होता है तो अगली बार वह अकेला आने की बजाय अपने किसी मित्र को भी साथ लेकर आना पसन्द करेगा।

- डॉ. पूर्ण सिंह डबास
एम-९३, साकेत, नई दिल्ली- ११००१७
चलभाष- ९८१८२११७७१

सत्यभाषण

अग्ने व्रतपते! व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि।।

जैसा कुछ अपने आत्मा में और सम्भवादि दोषों से रहित करके वैसा ही बोले, उसको सत्यभाषण कहते हैं। हमारे शास्त्रों में सत्य का व्रत लेना होता है, देखा जाय तो सत्य, विना वेदविद्या के स्वाध्याय के ठहरता नहीं है, अतः इस वेद-मन्त्र में कहा कि सत्यस्वरूप अग्रणी व्रतपते परमात्मन्! मैं आपसे सत्यभाषण का व्रत लेता हूँ, किन्तु साथ ही सत्यभाषी होने का सामर्थ्य भी चाहता हूँ। आप अवश्य कृपा करेंगे। सत्य की शास्त्रों में बड़ी महिमा गाई गई है-

सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्।

कहकर इतिश्री की है।

महाभारत में एक प्रकरण आता है जहाँ विदुर और महाराज धृतराष्ट्र का संवाद है। साथ ही महाभारत

का यह प्रसिद्ध श्लोक राष्ट्रपति-भवन में राष्ट्रपति की गद्दी के ऊपर लिखा है-

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः,
वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम्।
धर्मः स नो यत्र न सत्यमस्ति,
सत्यं न तद्यच्छलमभ्युपैति।।

अर्थात् वह सभा, सभा नहीं जिसमें वृद्ध पुरुष न हों। वे वृद्ध नहीं जो धर्म ही की बात नहीं बोलते। वह धर्म ही क्या जिसमें सत्य ही नहीं और वह सत्य ही क्या जिसमें छल का समावेश हो, अर्थात् वह सत्य ही नहीं जो छल से युक्त हो।

वास्तविकता यह है कि कुछ लोग दब्बू और आत्महीन होते हैं। उनसे यथार्थ सत्य कहा ही नहीं जाता है, क्योंकि वे निर्बल और अशक्त होते हैं कई बार पक्षपात में पड़कर भी व्यक्ति यथार्थ सत्य नहीं कहता है। ऐसे अवसरों के लिए मनु भगवान ने कहा-

सभां वा न प्रवेष्टव्यं वक्तव्यं वा समंजसम्।
अब्रुवन्विब्रुवन्वाऽपि नरो भवति किल्बिषी।।

जो व्यक्ति आत्महीन हैं उनको चाहिए कि वे सभा में प्रवेश ही न करें और यदि सभा में प्रवेश करें ही तो सत्य ही बोलें। यदि सभा में बैठा हुआ असत्य बात को सुनकर मौन रहे अथवा सत्य के विरुद्ध बोले तो वह मनुष्य महापापी होता है। जिस सभा में धर्माऽधर्म का विवेक न हो उसके लिए मनु कहते हैं-

धर्मो विद्धस्त्वधर्मेण सभां यत्रोपतिष्ठते।
शल्यं चास्य न कृन्तन्ति विद्धास्तत्र सभासदः।।

जिस सभा में अधर्म से धर्म घायल होवे और उस घायल धर्म के घाव को सभासद् पूरा न कर सकें तो

निश्चय जानो कि उस सभा में सभी सभासद् घायल पड़े हैं। अतः सभासदों को उपयुक्त है कि इस अधर्म रूपी काँटे को निकालकर बाहर करें, नहीं तो सभी सभासद् भी अधर्मरूपी काँटे से बिंधे, अर्थात् घायल समझे जायेंगे। अतएव सभा-सोसायटियों में जाकर व्यक्ति को सत्यधर्म का पालन करना और कराना चाहिए। क्योंकि-

नास्ति सत्यसमो धर्मो न सत्याद्विद्यते परम्।
न हि तीव्रतरं किंचिदनृतादिह विद्यते।।

सत्य के बराबर कोई अन्य धर्म नहीं है और सत्य से बढ़कर कुछ भी श्रेष्ठ नहीं है। इस संसार में अनृत-झूठ से बढ़कर अन्य कोई पाप कुकर्म नहीं है, अतः मानव को जहाँ तक हो सके अनृत से दूर रहकर, सत्य से सम्बन्धित रहना चाहिये, क्योंकि विश्व के समस्त धर्मों में सत्य ही सर्वोपरि है। अतः यह सत्य ही कहा जाता है-

अश्वमेधसहस्त्रं च सत्यं च तुलया धृतम्।
अश्वमेधसहस्त्राद्धि सत्यमेव विशिष्यते।।

सहस्रों अश्वमेध यज्ञों के किये पुण्य की और सत्य की तुलना की जाए तो सहस्रों अश्वमेध के पुण्यों से सत्य की ही विशेषता है, अर्थात् सत्य उस पुण्य से बढ़कर है। जब कभी मानव बोले तो उसकी वाणी में तीन विशेषताएँ होनी चाहिए-

सत्यं मृदु प्रियं वाक्यं धीरो हितकरं वदेत्।
आत्मोत्कर्षं तथा निन्दां परेषां परिवर्जयेत्।।

बुद्धिमान् मनुष्य सदा सत्य, मृदु और हितकर वाक्य ही बोले। अपनी बड़ाई करनेवाले वाक्य तथा दूसरों की निन्दा करनेवाले वाक्य कभी न बोले। अपितु-

ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोय।
औरों को शीतल करे आपा शीतल होय।।

शास्त्रकारों ने तो सत्यव्रती व्यक्ति को साधु कहकर पुकारा है-

सत्यमेव व्रतं यस्य दया दीनेषु सर्वदा।
कामक्रोधौ वशं यस्य स साधुः कथ्यते बुधैः।।

जिसका सत्य बोलना व्रत है और जो सर्वदा दीनों पर ही दया करता है। काम क्रोध को जिसने वश में कर लिया है। उसको बुद्धिमान् विद्वान् लोग साधु कहते हैं। ऐसे साधु लोगों ने ही कहा है-

ये वदन्तीह सत्यानि प्राणत्यागेऽप्युपस्थिते।
प्रमाणभूता भूतानां दुर्गाण्यति तरन्ति ते।।

जो मनुष्य मृत्यु के सामने उपस्थित होने पर भी मृत्यु से न डरकर बोलते हैं वे प्राणियों के लिए प्रमाण स्वरूप हैं और वे सब दुःखों से तर जाते हैं। जैसे सत्यवादी हरिश्चन्द्र जी महाराज के लिए प्रसिद्ध है।

चन्द्र टरै, सूरज टरै, टरै जगत् व्यवहार।
पै दृढ़व्रत हरिश्चन्द्र को टरै न सत्य विचार।।

सत्य क्या है? इसके सम्बन्ध में एक कवि ने कहा है-

सत्यस्य वचनं श्रेयः सत्यादपि हितं वदेत्।
यद् भूतहितमत्यन्तं तत्सत्यमिति कथ्यते।।

अर्थात्- सत्य वचन बोलना अत्यन्त कल्याणकर है और सत्य से हितकारी वचन बोलना उत्तम है। जो प्राणियों के लिए अत्यन्त हितकारी वचन है वही सत्य कहलाता है। वेद कहता है-

वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधु सन्दृशः।

मैं जब कभी भी बोलूँ वाणी से माधुर्य टपकना चाहिए। वाणी में मिठास होना चाहिए। मीठी वाणी जो सत्य से युक्त तथा हितकारिणी होती है उसका विरोधी पर प्रभाव होता है। अतः -

वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु।

हे वाणी के पति परमात्मा! हमारी वाणी में स्वाद पैदा कर दो। जब बालक जन्म लेता है तो बालक की जीभ पर सोने की श्लाका को शहद में भिगोकर उससे 'ओ३म्' लिखा जाता है, जिसका भाव होता है कि

बालक पर जन्म से ही यह संस्कार डाला जा रहा है कि बालक की वाणी से निकलनेवाला प्रत्येक शब्द आस्तिकता और ईश्वर-विश्वास से ओत-प्रोत हो, क्योंकि प्रभु का निज और सर्वश्रेष्ठ नाम 'ओ३म्' ही है। शब्द सोने की तरह मूल्यवान् तथा शहद की भाँति माधुर्यमय हो, अर्थात् हमारी वाणी सत्यमय हो, मूल्यवान् एवं मीठी भी हो। सम्भवतः पाण्डवों ने इसी कारण श्रीकृष्णजी महाराज को दौत्यकर्म करने के लिए चुना था, क्योंकि श्रीकृष्ण महाराज की वाणी में ये सभी गुण विद्यमान थे। अतः श्रीकृष्णजी महाराज जानते थे-

मानाद्वा यदि वा लोभात्क्रोधाद्वा यदि वा भयात्।
योऽन्यायादन्यथा ब्रूते सः नरः पापमाप्नुयात्।।

जो मनुष्य मान की इच्छा से, लोभ से, क्रोध से अथवा भय से वा किसी भी प्रकार से अन्याय के कारण भी असत्य बोलता है वह पाप का भागी होता है, अतः वाणी का चोर सबसे बड़ा चोर माना गया है, क्योंकि-

वाच्यर्था नियता सर्वे वाङ्मूला वाग्विनिःसृताः।
तान्तु यः स्तेनयेद्वाचं स सर्वस्तेयकृन्नरः।।

वाणी के बोलने के सभी अर्थ नियत हैं, क्योंकि सभी वाणियाँ वाक् मूल से ही निकलती हैं। उस वाणी की भी जो मनुष्य चोरी करता है वह मानो सभी चोरियों से बढ़कर है, अतः कभी भी वाणी की चोरी नहीं करनी चाहिए, अर्थात् मिथ्याभाषण नहीं करना चाहिए, अपितु सत्यभाषण ही करना उचित है।

कुछ लोग झूठी गवाही (साक्षी) भी दिया करते हैं। उनकी क्या स्थिति होती है इस पर शास्त्रकारों की व्यवस्था देखिये-

नग्नः मुण्डः कपालेन मिथ्यार्थी क्षुत्पिपासितः।
अन्धः शत्रुकुलं यच्छेद्यः साक्ष्यनृतं वदेत्।।

वह व्यक्ति नंगा होकर-नग्न शरीर और मुण्डे शिर वाला होकर, कपाल लेकर, भूखा-प्यासा रहकर भीख माँगता हुआ अन्धा होकर शत्रु के कुल को प्राप्त होता है जो झूठी साक्षी (गवाही) देता है, अतः मनुष्य को कभी भी झूठी साक्षी (गवाही) नहीं देनी चाहिए। जैसा कि आज कुछ लोगों ने पेशा बना लिया है, परन्तु वह पापी औंधे सिर होकर घोर अन्धेरे में पड़ता है जो धर्म के निश्चय करने में प्रश्न पूछने पर विपरीत या असत्य बोलता है। इस प्रकार का व्यक्ति इस लोक में तो कष्ट उठाता ही है, परन्तु मरकर भी परेशानी में ही रहता है, अतः संसार-सागर को तरने का सत्य ही एक साधन है-

एकमेवाद्वितीयं च यद्राजन्नावबुध्यसे।
सत्यं स्वर्गस्य सोपानं पारावारस्य नौरिव।।

जिस प्रकार समुद्र को पार करने के लिए एकमात्र साधन नाव है उसी प्रकार सत्य ही स्वर्ग में पहुँचने की एक मात्र सीढ़ी है और दूसरा साधन नहीं है। हे राजन्! हे मानव! यह बात भी भली प्रकार जान लो

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयात्, एष धर्मः सनातनः।।

हँस के मिलना वश में कर लेता है हर इन्सान को। सबसे मीठा बोलने की तुमको आदत होनी चाहिए। यदि धर्म की रक्षा करनी हो तो सत्य से ही की जाती है-

सत्येन रक्ष्यते धर्मो, विद्याऽभ्यासेन रक्ष्यते।
मृज्यया रक्ष्यते रूपं कुलं वृत्तेन रक्ष्यते।।
गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः।महीं।
अलुब्धैर्दानशूरैश्च सप्तभिर्धार्यते त्रीण्येव पदान्याहुः
पुरुषस्योत्तमं व्रतम्।
न द्रुह्येच्चैव दद्याच्च सत्यं चैव परं वदेत्।।

किसी व्यक्ति को भूमि, कीर्ति, यश, लक्ष्मी को पाना हो तो सत्यभाषण, सत्याचार आदि सत्य व्यवहार करें,

क्योंकि ये चारों उन्हीं को मिलती हैं।

भूमिः कीर्तिः यशो लक्ष्मीः पुरुषं प्रार्थयन्ति हि।
सत्यं समनुवर्तन्ते सत्यमेव भजेत्ततः।।

ये चारों सत्य का अनुकरण करती हैं। यदि इन्हें पाना है तो सत्य का सेवन करना होगा-

सत्यस्य वचनं साधु न सत्यात् विद्यते परम्।
सत्येन विधृतं सर्वं, सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्।।
सत्यार्जवं परं धर्ममाहुर्धर्मविदो जनाः।
दुर्ज्ञेयः शाश्वतो धर्मः स च सत्ये प्रतिष्ठितः।।

सत्यभाषण सर्वश्रेष्ठ है, सत्य से महान् कोई नहीं, क्योंकि सब कुछ सत्य से ही धारित है। सत्य में ही सब कुछ प्रतिष्ठित है, सत्य से ही प्रतिष्ठा होती है। सत्य को धारण करना, सत्य, सरल व्यवहार करना आदि को सत्यधर्मवेत्ता विद्वानों ने परम-धर्म कहा है। यह सत्य शाश्वत धर्म मुश्किल से जाना जाता है, क्योंकि वह सत्य में ही प्रतिष्ठित है, अतः सत्य से ही जाना जाता है और तो क्या सत्यस्वरूप परमेश्वर भी सत्य से ही जाना जा सकता है किसी साधन से नहीं। अतः उपनिषदों में लिखा है-

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा,
सम्यग् ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो,
यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः।।

अर्थात् वह जगत्कर्त्ता, धर्त्ता, संहर्त्ता परमेश्वर तप के द्वारा, सम्यक् ज्ञान के द्वारा, ब्रह्मचर्य के द्वारा तथा सतत् सत्यभाषण से ही जाना और प्राप्त किया जा सकता है। वह परमात्मा ज्योतिः स्वरूप, प्रकाशस्वरूप सभी के शरीरों में विद्यमान है। जिसको सत्य की भट्टी में तपे दोषरहित यतिजन ही सत्यवादिता, सत्यमानिता, सत्यकारिता आदि से देखते हैं, क्योंकि वेद भी कहता है-

तद विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः।
दिवीव चक्षुराततम्।।

वस्तुतः वह परमात्मा सूरयः= सत्यवेत्ता विद्वानों के ज्ञान का विषय है। मानव का परम कर्तव्य है कि अपने भाषण में माधुर्य, सत्यता, कोमलता पैदा करे-

कुदरत को नापसन्द है सख्ती बयान में,
और भी इससे नहीं लगाई है हड्डी जुबान में।
बनोगे खुशरुबे अक्ली में दिलशीरी जुबां होकर,
जहाँगीरी करेगी ये अदा नूरेजहाँ होकर।।

तुलसी मीठे वचन तै सुख उपजत चहुँ ओर।
वशीकरण इक मन्त्र है तजि दे वचन कठोर।।

कागा काको धन हरै कोयल काको देय।
इक जिह्वा के कारण, जग अपनो करि लेय।।

महर्षि दयानन्दजी सरस्वती की यह सत्योक्ति, कि- 'अमीचन्द! हीरा है पर कीचड़ में पड़ा है।' शराबी, कबाबी, जुआरी, निकम्मे अमीचन्द को रास्ते पर ले आई। बरेली नगर में कहे इस वाक्य ने- 'कमिश्नर नाराज और कलक्टर रूठ जाये', मैं तो सत्य ही कहूँगा।' राष्ट्र का बड़ा भारी काम किया और मुंशीराम को श्रद्धानन्द बना दिया।

सत्यमेव जयते।

लेखक- प्रो सत्यपाल शास्त्री
वैदिक सिद्धांत रत्नावली

सत्यार्थप्रकाश प्रचार सहयोग निधि

सत्यार्थ प्रकाश से उत्कृष्ट कोई ग्रन्थ नहीं जिसके प्रकाशन में आपकी पुण्य दान राशि का प्रयोग हो। सत्यार्थ प्रकाश प्रचार हेतु, कम राशि में अधिक संख्या में यह महान् ग्रन्थ जन-जन के हाथों में पहुँच सके, एतदर्थ निम्न योजना निर्मित की गई है-

सत्यार्थप्रकाश के प्रचार हेतु कृपया निम्नानुसार सहयोग कर लागत मूल्य से आधी कीमत में सत्यार्थप्रकाश का दिया जाना सुनिश्चित करें। आपके द्वारा सहयोगार्थ प्रदान की गई राशि के समक्ष अंकित प्रतियों पर आपका अथवा आपके किसी प्रियजन का चित्र ग्रन्थ के कवर पर दिया जावेगा।

1000 प्रतियों के प्रकाशन हेतु 25000 रुपये का दान देने का श्रम करें। 10 प्रतियाँ निशुल्क आपके पास भेजी जाएँगी।

आपका दान आयकर अधिनियम की धारा ८० जी के अन्तर्गत करमुक्त होगा। राशि न्यास के नाम ड्राफ्ट या चैक द्वारा भेजें अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, उदयपुर खाता क्रमांक 310102010041518, IFSC-UBIN 0531014 में जमा कर सूचित करें।

डॉ. अमृत लाल तापड़िया, संयुक्तमंत्री-न्यास

आमवात (रूमेडाइट आर्थराइटिस)

सन्धियों में होने वाले रोगों से आमवात एक प्रमुख व्याधि है। वर्तमान समय में लोगों की विकृत जीवन शैली और विरुद्ध आहार-विहार के कारण प्रायः अधिकतर व्यक्तियों की सन्धियों में शूल होता रहता है। यह रोग मारक न होते हुए भी अन्य रोगों की अपेक्षा अत्यन्त कष्टदायी होता है। इस रोग का लक्षण है- 'स्तब्धं च कुरुते गात्रम्' अर्थात् शरीर की सन्धियों में शूल, शोथ व जकड़ाहट होती है। इसकी तुलना पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान में वर्णित 'रूमेटाइड आर्थराइटिस' से कर सकते हैं क्योंकि इसमें भी सन्धियों में शूल, शोथ जकड़ाहट होना पाया जाता है। यह सन्धियों में आम के संचय होने से होती है। विश्व में अक्षमता उत्पन्न करने वाली व्याधियों में आमवात प्रमुख हैं। क्योंकि इस व्याधि में जितने अधिक लोगों को दीर्घकाल तक बहुत कष्ट भोगना पड़ता है वैसा किसी अन्य रोग में नहीं भुगतना पड़ता है।

आमवात शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है- आम+वात। अग्नि की मन्दता से भुक्त अन्न का अच्छी प्रकार पाचन न होने पर आमाशयगत अपक्व अन्न रस ही आम कहलाता है। जब मन्दाग्नि के कारण उत्पन्न आम वायु के द्वारा प्रेरित होकर आमाशय, हृदय, सन्धि आदि में जाकर वेदना उत्पन्न करता है तो इस अवस्था में उत्पन्न व्याधि को आमवात कहते हैं।

कारण

१. **विरुद्धाहार**- आमवात के कारणों में सबसे प्रमुख कारण विरुद्ध आहार को माना है। विरुद्ध आहार का मतलब है कि गुण-कर्म-स्वभाव से विपरीत द्रव्यों का एक साथ सेवन करना। जैसे- दूध के साथ मछली, फल और दूध, तिक्त गुण युक्त पदार्थ और प्याज के साथ दूध का सेवन करना।

वर्तमान के प्रगतिशील शिष्ट एवं समृद्ध समाज में इस ओर किसी का ध्यान नहीं है। फूड सलाद, फूड शेक, दूध एवं अण्डा आदि को अच्छा टॉनिक समझकर बहुतायत में प्रयोग किया जाता है। वास्तव में ये विरुद्धाहार है। इसी प्रकार समुद्र के समीप वाले प्रदेशों में नींबू, इमली आदि अम्ल रस प्रधान द्रव्यों का सेवन करना देश विरुद्ध आहार है। वर्षा ऋतु से वात प्रधान, बसन्त ऋतु में कफ प्रधान व शरद ऋतु में पित्त प्रधान द्रव्यों का सेवन करना कालविरुद्ध आहार है। मन्दाग्नि होने पर गरिष्ठ पदार्थों का सेवन अग्नि विरुद्ध आहार है। पाचन शक्ति से अधिक भोजन करना मात्रा विरुद्ध आहार है। कफ प्रकृति के व्यक्ति का स्निग्ध, गुरु व कफ वर्धक द्रव्यों का सेवन करना, पित्त प्रकृति के मनुष्य का पित्त वर्धक द्रव्यों का सेवन करना एवं वात प्रकृति के मनुष्य का वात वर्धक द्रव्यों का सेवन करना दोष विरुद्ध आहार है।

आयुर्वेद की दृष्टि से विरुद्धाहार आमवात का प्रमुख कारण माना गया है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान इन कारणों का समर्थन नहीं करता। परन्तु विरुद्धाहार से शरीर के कोष (Cells) विकृत तैय्यार होते हैं। दीर्घकाल तक विरुद्धाहार करते रहने से अनेक रोग होने की सम्भावना रहती है जिनमें आमवात एक प्रमुख व्याधि है।

विरुद्ध चेष्टा (विहार)- खाते ही सो जाना, आलस्य प्रमाद में पड़े रहना, शारीरिक श्रम का अभाव, रात्रि जागरण, दिवाशयन, टीवी या मोबाइल देखते हुए भोजन करना आदि इसके अन्तर्गत आते हैं।

मन्दाग्नि- जठराग्नि और धात्वाग्नि के मन्द होने से खाये अन्न का परिपाक ठीक से नहीं होता। इससे आमरस की उत्पत्ति होकर आमवात रोग हो जाता है

स्निग्ध एवं गुरु आहार- अतिमात्रा में गुरु स्निग्ध भोजन करने के पश्चात् आराम करने से अथवा व्यायाम या परिश्रम करने से भोजन का पाचन सम्यक् न होने से भी आमोत्पत्ति होकर आमवात रोग होता है।

मानसिक कारण- मन की स्थिति का भी अग्नि पर प्रभाव होता है। जब मन काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष, भय, चिन्ता, शोक, दीनता आदि से ग्रस्त रहता है तो पाचन शक्ति अल्प होने से भोजन ठीक से नही पचता। इससे आम की उत्पत्ति होती है और यह आम

आमवात को उत्पन्न करने का मुख्य कारण है।

प्रसवोत्तर अवस्था- प्रसूति एवं गर्भस्राव- गर्भपात के बाद विरुद्ध आहार-विहार करने से भी आमवात रोग हो जाता है। आयुर्वेदीय पद्धति के अनुसार प्रसूति के बाद शरीर से दूषित रक्त निर्गमन के लिए उष्ण, तीक्ष्ण, कटु, तिक्त औषध जैसे मेथी, शुण्ठी, मरिच, आजवायन आदि का प्रयोग प्रधान रूप से कोष्ठगत वातशमन एवं गर्भाशय संकोचक कर्म की दृष्टि से किया जाता है। परन्तु वर्तमान समय में प्रसवोत्तर जिस प्रकार की सुश्रूषा की जाती है उसमें वातशमन तथा दूषित रक्त निर्गमन के लिए कोई विशेष चिकित्सा नहीं रहती। वैसे भी रक्तस्राव अधिक होने से धातुक्षय, मन्दाग्नि और वात प्रकोप होता है। मन्दाग्नि से आमोत्पत्ति होती है और इन कारणों से आमवात रोग हो जाता है।

चिकित्सा- आम की उत्पत्ति के कारण ही आमवात की उत्पत्ति होती है। अतः आम की चिकित्सा ही आमवात की चिकित्सा है। इसके लिए दो उपाय अपनाये जाते हैं।

१. शरीर से आम का निस्तारण २. आम का पाचन

१. शरीर से आम का निस्तारण- विरेचन कराने से आमाशयगत आम का निस्तारण हो जाता है। विरेचन हेतु हरीतकी, त्रिफला एवं एरण्ड तेल का सौंठ के साथ प्रयोग किया जाता है।

२. आम का पाचन- विरेचन द्वारा कोष्ठशुद्धि के पश्चात् आमपाचनार्थ आयुर्वेद में बहुत से औषध योगों का वर्णन है जिनमें कुछ निम्नलिखित हैं।

१. चूर्ण- नागर चूर्ण, त्रिवृत्तचूर्ण, हिंग्वादि चूर्ण, वैश्वानर चूर्ण, पंचकोल चूर्ण, अमृतादि चूर्ण व चित्रकादि चूर्ण।

२. वटी- संजीवनी वटी, अग्नि तुण्डी वटी, रसोन वटी, आम पाचन वटी, चित्रकादि वटी, आम प्रमथिनी वटी आदि।

३. रसयोग- समीर पन्नग रस, वात गजांकुश रस, आमवातारि रस, वात गजेन्द्र रस, योगेन्द्र रस, आमवात विध्वंसन रस।

४. कषाय- एरण्डादि कषाय, रास्नासप्तक कषाय, रास्ना दशमूल कषाय ।

५. गुग्गुल के योग- योगराज गुग्गुलु, सिंहनाद गुग्गुलु, शिग्रु गुग्गुलु, रास्नादि गुग्गुलु, अमृतादि गुग्गुलु, त्रयोदशांग गुग्गुलु ।

६. लौह- चित्रकादि लौह, विडंगादि लौह, पंचामृत लौह।

७. आसवारिष्ट- पुनर्नवासव, अमृतारिष्ट, दशमूलारिष्ट।

उपरोक्त दवाओं में से आवश्यकतानुसार दवाओं का चयन कर आमदोष पाचनार्थ प्रयोग किया जाता है। एक वयस्क रोगी हेतु निम्न व्यवस्था पत्र को प्रयोग में लिया जा सकता है।

१. वात गजांकुश रस २५० मि.ग्रा.
योगराज गुग्गुलु समीर ५०० मि.ग्रा.
समीर पन्नग रस १२५ मि.ग्रा.
प्रवाल भस्म ५०० मि.ग्रा. ऐसी एक-एक मात्रा सुबह-शाम शहद से लेकर ऊपर से रास्नासप्तक क्वाथ पीवें।

२. रास्नासप्तक क्वाथ- २० मि.लि. प्रातः सायं उपरोक्त दवा के साथ लेवें।

३. चित्रकादि वटी- २-२ गोली सुबह शाम खाने से पहले जल से लेवें।

४. अमृतारिष्ट- २० मि.लि. तथा
दशमूलारिष्ट- २० मि.लि. दोनों को सुबह-शाम बराबर पानी मिलाकर खाने के बाद पीवें।

५. निर्गुण्डी+एरण्ड पत्र+हरिद्रा- इनको पानी में डालकर पतीली के ऊपर जाली रखकर उसपर कपड़े की पोटली रखकर भाप से गर्म करके प्रभावित अंग का सेक करें।

पथ्यापथ्य- आमवात रोग में पथ्यापथ्य का ध्यान रखना आवश्यक है। इस रोग के लिए पथ्यापथ्य नीचे दिये जा रहे हैं।-

पथ्य- लहसुन, हिंगु, सहिजन, अजवायन, काली मिर्च जीरक, शुण्ठी, शाली चावल, यव, करेला, बथुआ, परवल, लौकी, निम्बपत्र, गोमूत्र, शहद, उष्ण जल, अल्प व्यायाम, उष्ण वस्त्र, पंचकोल सिद्ध जल, रूक्ष बालू से सेक, विबन्ध नाशक आहार-विहार एवं एरण्ड तैल अत्यन्त हितकर हैं।

अपथ्य- दुग्ध, दही, मछली, उड़द, मिष्ठान्न, दूषित जल, पूर्व दिशा की वायु, मेघाछन्न आकाश, विरुद्ध आहार विहार, पशु-पक्षी मांस, वेग विधारण, रात्रि जागरण, दिवा शयन, चिन्ता, शोक, आलस्य आदि तथा सभी अभिष्यन्दी गुरु पदार्थ हानिकारक हैं।

लेखक- वेदमित्र आर्य
सेवानिवृत्त आयुर्वेदिक चिकित्सक
१३ श्री राम नगर, से.-६
हिरणमगरी, उदयपुर

कहानी दयानन्द की

कथा सरित

जब स्वामी जी फर्रुखाबाद पहुँचे तो वहाँ पर लाला जगन्नाथ के विश्रांत घाट पर ठहरे। उन दिनों जो लोग स्वामी जी के सम्पर्क में आकर के वैदिक सद्धर्म पर चलने का निश्चय करते थे, स्वामी जी प्रायः उनको विधि पूर्वक यज्ञोपवीत दिया करते थे। फर्रुखाबाद में अनेक वैश्य रईसों ने स्वामी जी से यह जो पवित्र यज्ञोपवीत लिया उनमें लाला द्वारका प्रसाद, गिरधारी लाल, लाला जगन्नाथ, बाबू दुर्गा प्रसाद, पण्डित पीताम्बर दास आदि का नाम प्रमुख है। मूर्तिपूजा के खण्डन के कारण पौराणिक लोग तो सदा ही स्वामी जी से असंतुष्ट रहा करते थे। यहाँ भी जब लाला जगन्नाथ का यज्ञोपवीत किया गया तो पौराणिक पण्डितों ने कहना प्रारम्भ कर दिया कि यज्ञोपवीत अत्यन्त अनिष्टकारी होगा क्योंकि इसमें गणेश आदि का पूजन तो किया ही नहीं गया। दूसरा शुक्रास्त के समय यज्ञोपवीत सम्पन्न हुआ है। इन दोनों कारणों से अनिष्ट होना तय है। इस पर स्वामी जी ने उत्तर दिया कि गणेश आदि का पूजन तो वेद विरुद्ध है अतः गणेश पूजन का ना होना कभी भी अनिष्टकारी नहीं हो सकता। और जहाँ तक शुक्रास्त की बात है हमारा शुक्र तो ब्रह्म है वह कभी अस्त नहीं होता इसलिए आप लोग अनिष्ट की चिन्ता छोड़ दें।

स्वामी जी जन्मगत जाति-पाति और अस्पृश्यता का समर्थन नहीं करते थे बल्कि घोर विरोध करते थे। जो उस समय के ब्राह्मणों को पसन्द नहीं आता था। एक दिन सुखवासी लाल जो कि जाति से साध थे (साधों को उस समय में नीची जाति का माना जाता था) स्वामी जी के लिए कढ़ी और भात बनवाकर ले कर आए। स्वामी जी ने बड़े प्रेम से भोजन किया। इस पर ब्राह्मणों ने कहा कि- 'आप भ्रष्ट हो गए हैं जो साधों के घर का भोजन खा लिया।' महाराज ने जो उत्तर दिया वह महत्वपूर्ण है। उन्होंने कहा- 'देखो भोजन दो प्रकार से भ्रष्ट होता है एक तो यदि किसी को दुःख देकर धन प्राप्त किया जाए और उस धन से भोज्य पदार्थ खरीदकर करके भोजन बनाया जाए, दूसरे भोजन मलिन हो अथवा उसमें कोई मालिन वस्तु गिर जावे। यहाँ ऐसा कुछ भी नहीं है। साध लोगों का परिश्रम का पैसा है, उससे प्राप्त किया हुआ भोजन उत्तम है। यह सर्वथा ग्रहण योग्य है। इस पर ब्राह्मण लोग निरुत्तर हो गए।

यहीं पर एक पण्डित श्री गोपाल थे जो इस बात से अत्यन्त दुःखी थे कि स्वामी जी महाराज के आने के बाद अनेक लोगों की मूर्तिपूजा पर से श्रद्धा हट गई थी। इसलिए वे चाहते थे कि विद्वानों को बुलाकर के स्वामी जी को शास्त्रार्थ में परास्त किया जाए। परन्तु स्वामी जी के विद्या-बल के आगे यह सम्भव नहीं हो पाया। तब यही श्री गोपाल काशी चले गए, इस आशय को लेकर के कि काशी के पण्डितों से मूर्तिपूजा के समर्थन में एक व्यवस्था लिखवा ली जाए। काशी में उनको कोई नई व्यवस्था नहीं दी गई। एक पुरानी कोई व्यवस्था मूर्तिपूजा के समर्थन में लिखी हुई थी वह दे दी। नवीन व्यवस्था नहीं होने पर भी श्री गोपाल जी उसी को लेकर के फर्रुखाबाद आकर के लोगों पर प्रभाव डालने लगे कि देखिए काशी के पण्डितों ने मूर्तिपूजा का समर्थन किया है। परन्तु जब-जब भी शास्त्रार्थ की बात आई श्री गोपाल कुछ ना कुछ बहाना बनाते रहे।

यहीं पर एक घटना और घटी। एक व्यक्ति एक दिन स्वामी जी को अपमानित करने के लिए आया और स्वामी जी से पूछा कि गंगा मुक्ति देती है या नहीं? स्वामी जी ने कहा कि नहीं। इस पर उसने उन पर जूता फेंका और भागने

लगा। उसी समय अनेक साध लोग स्वामी जी के प्रवचन सुनने के लिए बैठे हुए थे। उन्होंने उसको पकड़ लिया और पीटने लगे। परन्तु स्वामी जी ने उसे छोड़ दिया, और कहा कि यह इसने जो कार्य किया है वह अपने अज्ञान के वशीभूत होकर के किया है। निर्बल पर दया करना ही वास्तविक प्रशंसा है।

फर्रुखाबाद में ही श्री महाराज का पण्डित हलधर ओझा से प्रसिद्ध शास्त्रार्थ हुआ। ओझा जी का नाम बड़ा प्रसिद्ध था और एक बड़ी भीड़ के साथ वे स्वामी जी से शास्त्रार्थ करने पहुँचे। शास्त्रार्थ तो वस्तुतः मूर्तिपूजा पर था, परन्तु ओझा जी ने मद्यपान की बात छेड़ दी। स्वामी जी ने कहा कि निर्धारित विषय से भिन्न विषय पर चर्चा नहीं की जानी चाहिए और वैसे भी मद्यपान तो सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है। ओझा जी बोले कि शास्त्रविरुद्ध कैसे? लेख है- **'सौत्रामण्यम् सुरां पिवेत।'** स्वामी जी ने कहा कि यहाँ जो 'सुरा' शब्द आया है उसका अर्थ सोमलता है। इसका अर्थ मदिरा नहीं है। इसके बाद ओझा जी कभी संन्यासी का लक्षण पूछने लगे, कभी ब्राह्मण का लक्षण पूछने लगे और संस्कृत संभाषण में भी उनकी गति नहीं है यह भी स्पष्ट हो गया। अब अन्य विषयों पर चर्चा होती रही। पुनः जब बहुत समय निकल गया तो लाला जगन्नाथ ने खड़े होकर पण्डितों से पूछा कि धर्म की साक्षी में आप बताइए किसका पक्ष ठीक है? इस पर अनेक पण्डितों ने कहा- पण्डित हलधर जी अपनी प्रतिज्ञा प्रमाणित नहीं कर सके। यह सुनकर के ओझा जी मूर्छित हो गए उनके साथी उन्हें उठाकर के ले गए। इस प्रकार स्वामी जी की विद्वता की चर्चा और भी गम्भीरता से विद्वानों के मध्य होने लगी। फर्रुखाबाद में वासुदेव महानन्द राम के नाम से एक दुकान थी। दुकान के मालिकों ने शिव मन्दिर बनाने का संकल्प किया था। पर स्वामी जी के सम्पर्क में आने के बाद उनके उपदेश सुनने के बाद उन्होंने मन्दिर बनवाने का संकल्प छोड़कर के एक यज्ञशाला बनाने का विचार किया। परन्तु मूर्ति पूजकों के दबाव में उनकी इच्छा पूरी नहीं हुई। और उन्होंने गंगा मन्दिर बनाया।

प्रस्तुति- नवनीत आर्य
नवलखा महल, उदयपुर

सत्यार्थ मित्र बनें

न्यास के कार्यों को गति प्रदान करने के लिए 5100 रु. (पाँच हजार एक सौ) वार्षिक का सहयोग प्रदान करें।

आपका मात्र ५१०० रुपये वार्षिक का सहयोग न्यास के कार्य को अद्वितीय गति प्रदान कर सकता है।

हमारे अत्यन्त आत्मीय बन्धुजन!

इस अपील को मेरी व्यक्तिगत अपील कहिए अथवा न्यास की अपील समझिए। यह आप तक पहुँचे और आपकी आत्मीयता हमें प्राप्त हो, इसी नाते हम प्रथम बार अर्थ सहयोग का निवेदन कर रहे हैं।

आपको यह जानकारी होगी ही कि नवीन, आकर्षक प्रकल्पों का निर्माण कर न्यास सहस्रों लोगों तक वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्वों को अग्रप्रसारित कर रहा है। सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, उदयपुर द्वारा आर्यावर्त्त चित्रदीर्घा में वेद, वेद के प्रादुर्भाव, भारतीय ऋषियों के योगदान, योगिराज श्री कृष्ण और भगवान राम के पावन जीवन–चरित्र, मेवाड़ की माटी के गौरव महाराणा प्रताप, आर्यसमाज के रत्नों, भारत को स्वतन्त्रता दिलाने वाले क्रान्तिकारियों, सत्यार्थ प्रकाश चित्रावली एवं महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र के माध्यम से व संस्कार वीथिका के माध्यम से मानव निर्माण की पूरी योजना आगन्तुकों के सामने रखी जा रही है। इस क्रम में मानों महर्षिवर की संस्कार विधि मूर्तरूप में चित्रित हो गयी है।

वहीं उच्चतम गुणवत्ता के 3D थियेटर का निर्माण कर महापुरुषों के जीवन–चरित्र का दिग्दर्शन भी कराया जा रहा है। यहाँ यह अंकित करना आवश्यक है कि मुक्त हस्त से दिए हुए उदार अर्थ के सहयोग से भव्य संस्कार वीथिका परिसर व थियेटर का निर्माण माननीय सुरेश चन्द्र जी आर्य; अहमदाबाद और माननीय दीनदयाल जी गुप्त; कोलकाता के पवित्र सहयोग से हो पाया है एवं संस्कारों का निर्माण आर्यजनों के सामूहिक सहयोग से एकत्रित धन से हुआ है। परन्तु इनको गति देने के लिए, वर्ष में सारे प्रकल्प 365 दिन गतिशील रहें, इसके लिए आवश्यक है कि कुछ लोग आगे आएँ और प्रतिवर्ष अपना योगदान दें, इसीलिए आपसे यह निवेदन कर रहा हूँ। **मैं व्यक्तिगत रुप से अनुगृहीत होऊँगा अगर आप मात्र 5100 सौ रुपये प्रतिवर्ष देने का संकल्प लेंगे।** न्यास का एकाउन्ट नम्बर भी नीचे अंकित है। न्यास को प्रदत्त दान आयकर अधिनियम की धारा 80G के अन्तर्गत कर मुक्त है।

हमें आशा ही नहीं विश्वास है कि आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर 5100 रुपये वार्षिक का यह अर्थ सहयोग प्रदान करने की कृपा करेंगे। **निश्चित मानिये आपके सहयोग से जो ऊर्जा और गति हमें मिलेगी वह लाखों लोगों तक वैदिक संस्कृति के उदात्त मूल्यों को सम्प्रेषित करने में मील का पत्थर साबित होगी।**

निवेदक- अशोक आर्य, अध्यक्ष–न्यास

बैंक श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, मेन ब्रांच, दिल्ली गेट, उदयपुर बैंक एकाउन्ट का विवरण : AC. No. : 310102010041518, IFSC CODE- UBIN 0531014, MICR CODE- 313026001 में जमा करा कृपया सूचित करें।

समाचार

श्री किशोर मकवाना किया नवलखा महल ; सां. केन्द्र का अवलोकन

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती का छूआछूत उन्मूलन में महत्वपूर्ण योगदान है। तत्कालीन समय में देश में छूआछूत जैसी बुराई का बोलबाला था। ऐसे समय में महर्षि दयानन्द ने छूआछूत उन्मूलन के लिए कई महत्वपूर्ण कार्य किए ये विचार राष्ट्रीय अनुसूचित जाति

आयोग के अध्यक्ष श्री किशोर मकवाना ने व्यक्त किए। वे दिनांक १४ जुलाई २०२४ को उदयपुर प्रवास पर गुलाबबाग स्थित नवलखा महल सांस्कृतिक केन्द्र; उदयपुर का अवलोकन करने हेतु पधारे थे।

श्री मकवाना के नवलखा महल आगमन पर उनका पगड़ी व उपरणा पहनाकर न्यास के अध्यक्ष श्री अशोक आर्य एवं जनसम्पर्क सचिव श्री विनोद राठौड़ ने स्वागत किया। इसके पश्चात् उन्होंने नवलखा महल स्थित विभिन्न प्रकल्पों यथा आर्यावर्त्त चित्रदीर्घा, सोलह संस्कार वीथिका, राष्ट्रोन्नायक वीथिका, दीनदयाल-सुरेश चन्द्र आर्य मल्टीमीडिया सेन्टर एवं यज्ञशाला आदि का अवलोकन किया। श्री अशोक आर्य ने विस्तार से सभी प्रकल्पों के बारे में बताया।

नवलखा महल सांस्कृतिक केन्द्र के विभिन्न प्रकल्पों का अवलोकन करने के पश्चात् श्री मकवाना ने बताया कि यह मेरे लिए सौभाग्य का विषय है कि जिस स्थान पर बैठकर महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश का प्रणयन किया था उस स्थान का अवलोकन करके मैं धन्य हो गया। महर्षि दयानन्द की इस पावन कर्मस्थली पर जो प्रकल्प तैयार किए गए हैं उससे यहाँ आने वाले देशी-विदेशी पर्यटक निश्चित रूप से प्रेरणा प्राप्त कर रहे हैं और सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं का इस स्थल से प्रचार-प्रसार किया जा रहा है।

इस अवसर पर नवलखा महल सांस्कृतिक केन्द्र यूथ क्लब के श्री रवीन्द्र राठौड़, न्यास पुरोहित श्री नवनीत आर्य, कार्यालय मंत्री श्री भंवर लाल गर्ग, गाइड श्री सिद्धम तथा श्री लोकेश, श्रीमती दुर्गा, श्री देवीलाल एवं न्यास के अन्य कार्यकर्त्ता उपस्थित थे। - अशोक आर्य; अध्यक्ष

आर्य समाज बड़ी और एतिहासिक सफलता की ओर अग्रसर

आर्य प्रतिभा विकास संस्थान के १२ विद्यार्थियों ने यूपीएससी की प्रारम्भिक परीक्षा में प्राप्त की सफलता आर्य जगत् की ओर से बधाई।

शिक्षा सेवा के इस वृहद् क्रम में आर्य समाज द्वारा स्थापित आर्य प्रतिभा विकास संस्थान एक अनुपम संस्था है। आर्य प्रतिभा विकास संस्थान के माध्यम से आज लगभग ३८ विद्यार्थी सफलता प्राप्त कर भारत राष्ट्र उत्थान हेतु में उच्च पदों पर आसीन होकर सेवाएँ दे रहे हैं। अत्यन्त प्रसन्नता और हर्ष का विषय है कि विद्यार्थियों को मिल रही सफलता के क्रम में वर्ष २०२४-२५, यूपीएससी (सिविल) सेवा के प्रारम्भिक परीक्षा परिणाम में आर्य प्रतिभा विकास संस्थान के १२ विद्यार्थियों ने सफलता प्राप्त करके एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है।

उपरोक्त सभी विद्यार्थियों को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान-श्री सुरेश चन्द्र आर्य जी, अखिल भारतीय दयानन्द सेवाश्रम संघ के प्रधान एवं जेबीएम ग्रुप के चेयरनमैन- श्री सुरेन्द्र कुमार आर्य जी, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान- श्री धर्मपाल आर्य जी ने समस्त आर्य जगत् को हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ प्रदान की। विद्यार्थियों को बधाई और सभी अधिकारियो के प्रति आभार।

- विनय आर्य; दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

माँ शारदा आर्य समिति की कार्यकारिणी का गठन

माँ शारदा आर्य समिति; उदयपुर की मासिक बैठक और सत्संग को परिवारों में करने का निश्चय हुआ। जिससे महिलाओं को वैदिक धर्म, यज्ञ और संस्कारों से जोड़ा जाए। इसके अन्तर्गत दिनांक २७ जून २०२४ को श्रीमती सरला गुप्ता के घर पर यह बैठक एवं पारिवारिक सत्संग सम्पन्न हुआ। सत्संग वैदिक यज्ञ से प्रारम्भ हुआ। श्रीमती सरला

गुप्ता द्वारा यज्ञ सम्पन्न कराया गया। विशेष अतिथि के रूप मे पधारी डॉ.ज्योति चौधरी (स्त्री रोग विशेषज्ञ) ने महिलाओं में होने वाले रोग और मोनोपोज के समय होने वाली समस्या और उसके निदान के बारे में जानकारी दी। श्रीमती सौभाग्यवती जी एवं उगंता जी द्वारा ईश्वर भक्ति व मनोरमा गुप्ता द्वारा महर्षि दयानन्द के भजन प्रस्तुत किये गये। ललिता मेहरा द्वारा समिति के उद्देश्य की जानकारी दी एवं गायत्री मंत्र का भावार्थ बताया। सभी के विचार-विमर्श के पश्चात् करतलध्वनि के साथ माँ शारदा आर्य समिति की कार्यकारिणी का गठन हुआ। जिसमें मुख्य संचालिका के रूप मे श्रीमती योगिता श्रीमाली, सह-संचालिका एंव मीडिया प्रभारी- श्रीमती भाग्यश्री शर्मा, सह संचालिका- श्रीमती भारती आर्या एंव उगंता आर्या तथा निधि प्रमुख- श्रीमती लक्षिता कोठारी को चुना गया। - श्रीमती भाग्यश्री शर्मा; मीडिया प्रभारी

एशियन चैम्पियन्स विजेताओं ने किया नवलखा का अवलोकन

हाल ही में सम्पन्न एशियन चैम्पियनशिप में उपविजेता बनकर पूरे विश्व को चौंका देनेवाली भारतीय महिला लेक्रोसी टीम ने अपने कोच नरेश बत्रा के साथ नवलखा

महल सांस्कृतिक केन्द्र का अवलोकन किया और सभी खिलाड़ियों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की। कप्तान सुनीता मीणा ने कहा कि यह स्थल युवाओं के लिए आदर्श है क्योंकि हम जीवन में किसी भी मुकाम को प्राप्त करलें पर अपने संस्कारों को नहीं भूलें इसके लिए यह स्थल आदर्श है। कोच नरेश बत्रा ने भी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की। इससे पूर्व न्यास अध्यक्ष अशोक आर्य तथा जनसम्पर्क सचिव विनोद राठौड़ ने कोच व टीम का स्वागत किया। - भँवर लाल गर्ग; कार्यालय मंत्री

हलचल

क्या मात्र ६००० वर्ष पूर्व प्रथम मानव पीढ़ी पैदा हुई ?

इण्डोनेशिया की एक गुफा की दीवार पर बनाई गई तस्वीर ५१,२०० साल पुरानी है। इसमें एक इंसान और सुअर को दिखाया गया है। यह

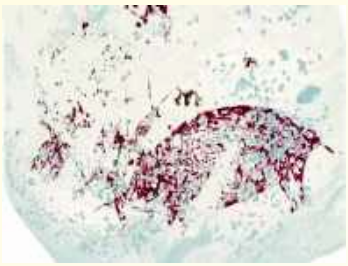

अब तक की सबसे पुरानी तस्वीर है। इसे देखकर पता चलता है कि उस समय के लोग चित्रों के जरिए कहानियाँ बताते थे।

यह गुफा की दीवार पर लाल और काले रंगों से बनी एक पेंटिंग है। मशाल की रोशनी में ये आकृतियाँ नाचती और कूदती हुई नजर आती हैं, मानो यह तस्वीर अपने आप में कोई कहानी सुना रही हो।

ऑस्ट्रेलिया स्थित ग्रिफिथ यूनिवर्सिटी में पुरातत्वविद् मैक्सिम ऑर्बट के नेतृत्व में यह अध्ययन हुआ है। ऑर्बट कहते हैं, 'इंसान के तौर पर, हम खुद को कहानी सुनाने वाली प्रजाति के रूप में दिखाते हैं। यह पेंटिंग हमारे इस काम का सबसे पुराना सबूत है। इससे पता चलता है कि चित्रकार सिर्फ एक तस्वीर नहीं बना रहे थे, बल्कि इन तस्वीरों के जरिए कहानियाँ भी बता रहे थे।'

ऑर्बट की टीम ने इण्डोनेशिया के सुलावेसी द्वीप पर लेंग बुलु सिपोंग ४ नाम के चूना पत्थर की गुफा की दीवारों पर कलाकृति की परतों का अध्ययन किया। गुफा में किए गए पिछले अध्ययनों से पता चला था कि होमो सेपियंस यानी आधुनिक मानव हजारों सालों से इस गुफा में आते थे और २७,००० से ४४,००० साल पहले दीवारों पर अपनी कहानियाँ बनाते थे। हजारों सालों में गुफा की दीवारों पर कैल्शियम कार्बोनेट की परत जमने से ये कलाकृतियाँ सुरक्षित रह गई हैं। ये ऐसी लगती हैं मानो एम्बर में फंसा हुआ कोई कीट हो।

नैश कहते हैं, 'मुझे यकीन है कि हमें ६०,००० साल से भी पुरानी कलाकृतियाँ मिलेंगी। अगर ऐसा हुआ, तो यह आधुनिक मनुष्यों के बारे में हमारी समझ को पूरी तरह से बदल देगी।'

जो लोग मानव की उत्पत्ति अर्थात् आदम की उत्पत्ति अधिक से अधिक ६००० वर्ष पूर्व मानते हैं उन्हें सोचना ही पड़ेगा की उक्त चरित्र कथाओं को बनाने वाला मानव कम से कम ५२००० साल पुराना तो है ही। वैदिक धर्म के अनुसार तो मानव एक अरब छियानवे करोड़ वर्ष पहले पैदा हुआ था, वहाँ इस खोज से कोई समस्या नहीं है। समस्या उन पाँच अरब लोगों की है जो मानव सृष्टि को केवल ६००० वर्ष पहले मानते हैं।

एक-दो नहीं बल्कि १३ भाषाओं में बात करते हैं इस हिंदी मीडियम स्कूल के बच्चे

हम आज आपको उत्तर प्रदेश के एक ऐसे स्कूल के बारे में बताने जा रहे हैं जहाँ के बच्चों को १३ भाषाओं का ज्ञान होता है।

आपको बता दें कि यह स्कूल जिसकी हम बात कर रहे हैं वो उत्तर प्रदेश के पीलीभीत जिले में मौजूद है। इस स्कूल के बच्चों को १३ भाषाओं की जानकारी है। बता दें कि यह मरौरी ब्लॉक उच्च प्राथमिक स्कूल; कैंच है। इस स्कूल के बच्चे तेलगु, तमिल, मलायलम, संथाली जैसी भाषाओं में अभिवादन करते हैं और आपस में संवाद भी करने लगें हैं। यह उपलब्धि हासिल करने वाला कैंच का यह परिषदीय विद्यालय १८०० बेसिक स्कूल में से इकलौता है।

अभी तक आपने सुना होगा कि सिर्फ महंगे प्राइवेट स्कूलों में ही दूसरी भाषाएँ पढ़ाई जाती हैं लेकिन अब इस सरकारी स्कूल ने भाषाओं की सीमाओं को लांघने का सिलसिला तोड़ते हुए एक कदम आगे बढ़ा दिया है। दरअसल सरकार ने सभी स्कूलों में भाषा संगम कार्यक्रम शुरू करने का निर्देश दिया था। इस कार्यक्रम के तहत स्कूलों में हर दिन बच्चों को देश में बोली जाने वाली किसी न किसी भाषा से रूबरू कराना था। इसके लिए बीएसए ने सभी खण्ड शिक्षा अधिकारियों को निर्देश भी जारी किए थे और उन्होंने स्कूल के प्रधानाध्यापकों को भी इस फैसले पर काम करे के निर्देश दिए थे जिसके बाद अब ये नतीजा निकलकर सामने आया है।

आपको बता दें कि इस स्कूल के बच्चे मलयालम, संथाली, मराठी, उर्दू, तमिल, तेलगु, सिंधी, पंजाबी जैसी १३ भाषाओं की बेसिक समझ रखते हैं साथ ही इन बच्चों को संस्कृत भी पढ़ाई जाती है।

'सद्गुरु की पहचान कैसे हो' गोष्ठी सम्पन्न

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के तत्वावधान में रविवार १४ जुलाई २०२४ को 'सद्गुरु की पहचान कैसे हो' विषय पर ऑनलाइन गोष्ठी का आयोजन किया गया। यह कोरोना काल से ६६१ वाँ वेबिनार था।

वैदिक विदुषी आचार्या विमलेश बंसल दर्शनाचार्या ने कहा कि- सदगुरु की पहिचान कैसे हो? नाना सूत्रों, मंत्रों, श्लोकों, संत वचनों द्वारा सदगुरु के लक्षण बताने का प्रयास किया। आज चारों ओर पाखण्ड, अंधविश्वास का बोलबाला दिखाई पड़ रहा है। गुरुडमवाद पुनः चरम सीमा पर पहुँच चुका है। उसके पीछे का मूल कारण अविद्या ही है और हम आर्यों का आलस्य। हमारे पास वैदिक ज्ञान होते हुए भी हम इसको निःस्वार्थ निष्काम भाव से आगे उतना नहीं बढ़ा पा रहे जितना बढ़ाना चाहिए।

हम वर्तमान के हाथरस हादसे को देखकर भी नहीं चेत पा रहे, श्वेत कोट-पैंट पहनकर कैसा सन्त? जिसकी वेशभूषा ही भगवा नहीं, न जो भगवान को माने, ऐसे स्वयं को भगवान बताने वाले अपने चरण पुजवाने वाले राष्ट्र के लिए कलंक नहीं तो और क्या हैं? जो मिथ्या आचरण, ऐषणाओं में जीने वाले, ठग विद्या को फैलाने वाले, इनकी पहचान कर इनके लिए प्रशासन द्वारा कड़ी कार्यवाही होनी चाहिए।

इसलिए महर्षि दयानन्द को कहना पड़ा इन बाह्य प्रतीक चिन्हों से साधु सन्तों की पहचान नहीं होती, सत्यवादी, सत्यमानी, सत्यकारी जीवन जीने वाला होने से होती है इत्यादि।

मुख्य अतिथि आर्य नेत्री अनिता रेलन व अध्यक्ष पूजा सलूजा ने वेद शास्त्रों को पढ़ने का आह्वान किया। परिषद् अध्यक्ष अनिल आर्य ने कुशल संचालन किया। राष्ट्रीय मंत्री प्रवीण आर्य ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

गायिका कुसुम भण्डारी, सन्तोष धर, कौशल्या अरोड़ा, राजश्री यादव, विजय खुल्लर, सरला बजाज के मधुर भजन हुए। - प्रवीण आर्य; मीडिया प्रभारी

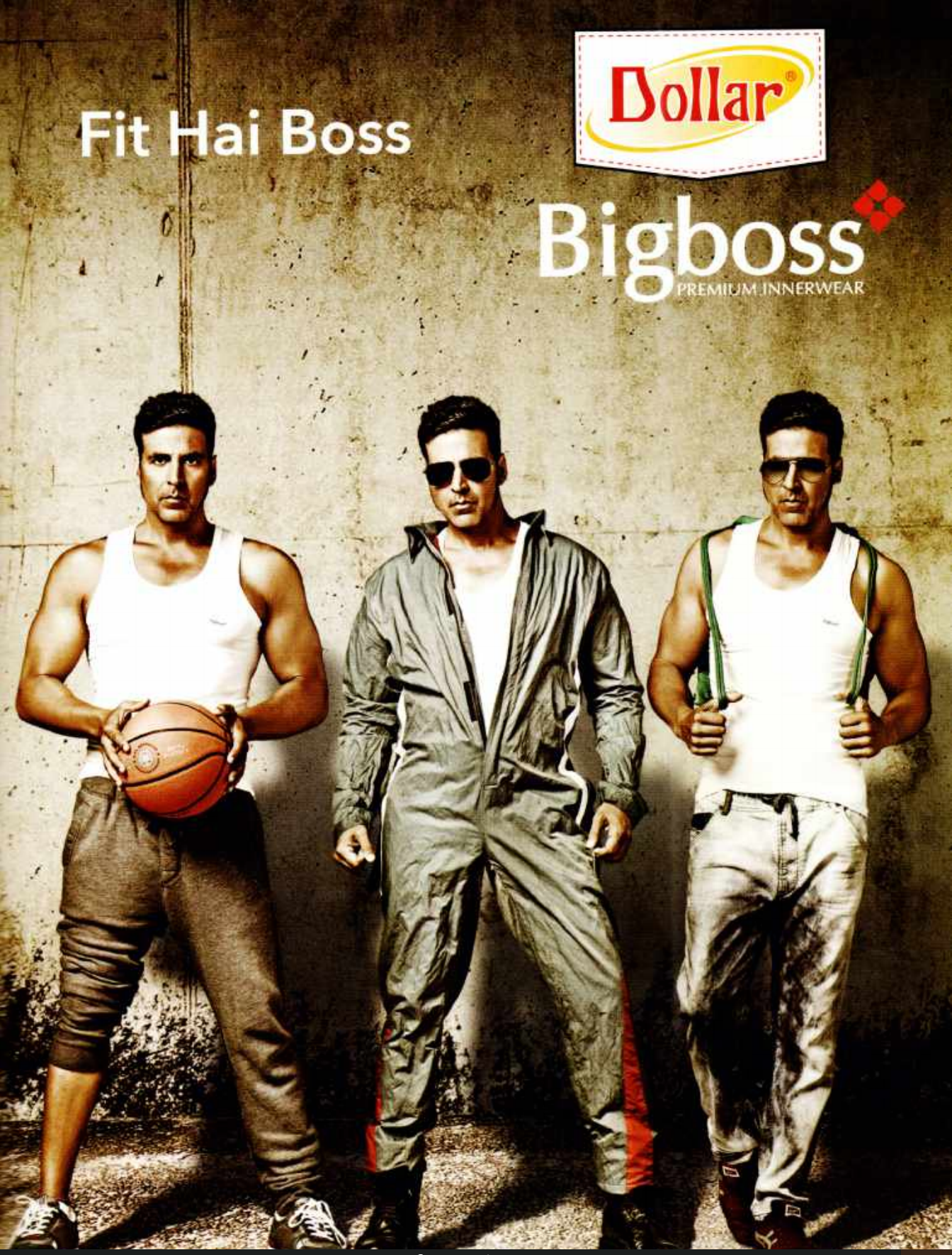
Fit Hai Boss
Dollar
Bigboss
PREMIUM INNERWEAR

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 August-2024 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2021-2023

प्रतिविम्ब साकार का साकार में होता है, जैसे मुख और दर्पण आकार वाले हैं और पृथक् भी हैं। जो पृथक् नहीं तो भी प्रतिविम्ब नहीं हो सकता। ब्रह्म निराकार, सर्वव्यापक होने से उसका प्रतिविम्ब ही नहीं हो सकता।

(नवीन वेदान्तियों को उत्तर) सत्यार्थप्रकाश नवम समुल्लास २३४

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा निदेशक- मुकेश चौधरी, चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित प्रेषण कार्यालय- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

मुद्रण दिनांक- प्रत्येक माह की ३ तारीख | प्रेषण दिनांक- प्रत्येक माह की ७ तारीख | प्रेषण कार्यालय- मुख्य डाकघर, चेतक सर्कल, उदयपुर